एकादशी

ग्यारह एकांकी नाटक

गोविन्ददास

१९४३

साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग

दो शब्द

प्रस्तुत संग्रह स्वनामधन्य सेठ गोविन्ददास जी के एकांकी नाटकों की नवीन कृति है। सेठ जी की सरल स्वाभाविक अपनी एक महत्वपूर्ण शैली है, अपना एक विशेष प्रयोजन है, हार्दिक अभिव्यक्ति का एक नया रूप है। भाषा की अनुरूपता के अतिरिक्त नाटकों का राजनीतिक महत्व है, और साथ ही साथ सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक व्यवस्था के परिवर्तन का ज्वलन्त प्रश्न सुन्दर ढंग से उपस्थित किया गया है। पुस्तक आदि से अन्त तक रोचक है। विशेषकर 'व्यवहार' लेखक की विचारधारा का प्रतीक है। यह पुस्तक हिन्दी प्रेमी जनता में भारतीय इतिहास को उसके पतन एवं उत्थान के सच्चे कारणों को समझ कर पढ़ने की लिप्सा जागरित कर सकने की क्षमता रखती है।

पुरुषोत्तमदास टंडन
मंत्री
साहित्य भवन लिमिटेड

निवेदन

'एकादशी' के ग्यारह नाटकों में से आठ ऐतिहासिक और तीन सामाजिक हैं। ऐतिहासिक नाटकों की कथाएँ भिन्न-भिन्न ऐतिहासिक ग्रन्थ और किवदन्तियों से ली गयी हैं। इन नाटकों के कथानक मेरी चौथी जेल-यात्रा के समय जबलपुर-जेल में ही लिख डाले गये थे; परन्तु बीमारी के कारण अवधि के पूर्व छूट जाने से इनकी रचना जेल में नहीं हो सकी। ये सभी नाटक मई सन् १९४२ में जबलपुर में लिखे गये हैं।

गोपाल बाग,
जबलपुर,
श्रावण कृष्ण ११, १९९९

—गोविन्ददास

विषय-सूची

एकादशी

सहित या रहित

(एक ऐतिहासिक एकांकी)

मुख्य पात्र—

यशस्कर	::	::	काश्मीर का राजा
ज्ञानादित्य	::	::	काश्मीर का न्यायाधीश
सेवाश्रय	::	::	यशस्कर का भृत्य
सत्यव्रत	::	:: ::	एक वणिक
लक्ष्मीदत्त	::	:: ::	एक वणिक
लेखराज	::	:: ::	एक लेखक

पहला दृश्य

स्थान—काश्मीर के श्रीनगर में राज-प्रासाद का बाह्यालय

समय—मध्याह्न

[बाह्यालय (दीवाने आम) अत्यन्त विशाल आलय है। भित्तियाँ पाषाण की हैं, जिनमें नाना प्रकार की सुन्दर मूर्तियाँ खुदी हुई हैं। भित्तियों में बड़े-बड़े द्वार हैं, जिनकी चौखटों और किवाड़ों में खुदाव का काम है और यत्र-तत्र हाथी दाँत लगा हुआ है। खुले हुए द्वारों से दूर पर हिमाच्छादित शिखरों वाली पर्वत-मालाएँ दृष्टिगोचर होती हैं, जिनका हिम मध्याह्न के सूर्य की किरणों से चमक रहा है। ऊँचे-ऊँचे शिखरों के नीचे का पर्वत-प्रदेश वृत्तों से भरा हुआ है; इनमें अधिकतर चिनार के वृत्त हैं। पाषाण के स्थूल खुदावदार स्तम्भों पर आलय की छत है। आलय की पृथ्वी पर पाषाण का ही चिकना पटाव है। आलय के एक ओर चैत्य का कुछ भाग दिखायी देता है। बीच में रत्न-जटित स्वर्ण का सिंहासन रखा हुआ है और उसके सामने, उसकी ओर जिनका मुख है, ऐसी, रत्नों से जड़ी हुई सुवर्ण की अनेक आसंदियाँ (बैठने की चौकियाँ) रखी हैं। सिंहासन और आसंदियों पर कामदार कौशेय वस्त्रों से ढकी हुई गद्दियाँ बिछी हैं और उन पर तकिये लगे हैं। अनेक ऊँची-ऊँची रजत की धूप-दानियों से सुगन्धित धूम उठ रहा है। सिंहासन पर यशस्कर बैठा हुआ है। यशस्कर

अधेड़ अवस्था का, गौर वर्ण, ऊँचा-पूरा, सुन्दर व्यक्ति है। सँवारे हुए लम्बे केश और ऊपर को चढ़ी हुई बड़ी-बड़ी मूँछें हैं। सारे बाल काले हैं। बालों में सामने की ओर अर्द्धचन्द्राकार श्वेतपुष्पों की माला बँधी हुई है। ऊपर के शरीर को नील वर्ण का कामदार कराल-वस्त्र (एक प्रकार का बहुमूल्य ऊनी कपड़ा) ढाँके हुए है। यह वस्त्र भुजाओं के नीचे पसवाड़ों तथा कटि में एक विशेष ढँग से बँधा है। इस वस्त्र के छोर दाहनी ओर लटक रहे हैं। नीचे के शरीर पर वह श्वेत रंग का कौशेय वस्त्र धारण किये है। उसके कानों में कुण्डल, गले में हार, भुजाओं पर केयूर, हाथों में वलय और उँगलियों में मुद्रिकाएँ हैं। सारे आभूषण स्वर्ण के हैं और रत्नों से देदीप्यमान। रत्न-जटित भूषणों के अतिरिक्त उसके गले में लम्बी पुष्प-माला है। उसके मस्तक पर केशर का त्रिपुण्ड है। कौशेय वस्त्रों तथा आभूषणों से सुसज्जित तीन युवतियाँ सिंहासन के पीछे खड़ी हैं। एक यशस्कर के सिर पर हाथी दाँत की डाँड़ी का कौशेय-वस्त्र का श्वेत छत्र लगाये है, जिसमें मोतियों की झालर लगी है और दो युवतियाँ यशस्कर पर सोने की डाँड़ी के सुरा गाय की पूँछों के श्वेत चामर डुला रही हैं। सहासन के बाईं ओर सेवाश्रय खड़ा हुआ है। सेवाश्रय वृद्धावस्था का, गौर वर्ण, ऊँचा-पूरा व्यक्ति है। सिर और मूँछों, दाढ़ी के बाल श्वेत हो गये हैं। सिर पर वह उष्णीष बाँधे है। उसका ऊपर का शरीर कम्बल-वस्त्र (एक प्रकार का साधारण ऊनी कपड़ा) से ढँका हुआ है। यह कपड़ा यशस्कर के सदृश ही भुजाओं के नीचे पसवाड़ों और कटि में एक विशेष ढँग से बँधा है। नीचे के शरीर पर वह सूती अधोवस्त्र पहने है। उसके आभूषण स्वर्ण के हैं। उसकी कटि में, चमड़े के कमरपट्टे में, एक छोटा, किन्तु चौड़ा,

खड्ग लटक रहा है। उसके मस्तक पर भी त्रिपुण्ड लगा हुआ है। सिंहासन के सामने की, बीच की, आसंदी पर ज्ञानादित्य बैठा हुआ है। ज्ञानादित्य भी वृद्ध है। उसका वर्ण भी गौर है और वह भी ऊँचा-पूरा व्यक्ति है। सारे बाल श्वेत हैं। ऊपर के शरीर पर कम्बल-वस्त्र है और नीचे के शरीर पर कौशेय का अधोवस्त्र। आभूषण स्वर्ण के रत्न-जटित हैं। उसकी आसंदी के सामने सुवर्ण की एक चौकी रखी हुई है, जिस पर कुछ कागज़ रखे हैं। इन कागज़ों में से एक कागज़ फैला हुआ है। ज्ञानादित्य की आसंदी के दाहनी ओर सत्यव्रत और लक्ष्मीदत्त खड़े हुये हैं। सत्यव्रत की अवस्था यद्यपि पचास वर्ष से अधिक नहीं है, परन्तु वह अत्यन्त वृद्ध दिखाई पड़ता है। उसके वर्ण से जान पड़ता है कि वह कभी गौर वर्ण का रहा होगा, परन्तु अब तो धूप, शीत आदि के कारण उसका रंग साँवला-सा हो गया है। चमड़ी में यत्र-तत्र झुर्रियाँ भी दीख पड़ती हैं। वह यद्यपि ऊँचा है, परन्तु बहुत ही दुबला। उसके बाल सन-से श्वेत हो गये हैं। उसके ऊपर के शरीर पर यद्यपि कम्बल-वस्त्र है, तथापि वह यत्र-तत्र फट गया है। नीचे के शरीर का सूती अधोवस्त्र भी फट गया और मैला हो गया है। उसका सारा शरीर भूषणों से रहित है। लक्ष्मीदत्त लगभग पचास वर्ष की अवस्था का गौर वर्ण, ऊँचा-पूरा व्यक्ति है, शरीर में स्थूल। बाल खिचड़ी। उसके ऊपर के शरीर पर कराल-वस्त्र है और नीचे के शरीर पर कौशेय का अधोवस्त्र। आभूषण स्वर्ण के रत्न-जटित हैं। आलय की अन्य आसंदियों पर राजपुत्र (राजा के नातेदार), सामन्तगण (राजकर्मचारी), प्रतिष्ठित नागरिक इत्यादि बैठे हैं। चैत्य में अन्य नागरिक खड़े हुए हैं। वर्ण सभी का गौर है और वेष-भूषा यशस्कर, ज्ञानादित्य और लक्ष्मीदत्त आदि के सदृश।]

सत्यव्रत

(अत्यधिक नम्रता से) बारह वर्ष......बारह वर्ष के पूरे एक युग की बात है, परमभट्टारक !

यशस्कर

तुम्हें काश्मीर छोड़े एक युग बीत गया ?

सत्यव्रत

हाँ, एक युग, परमभट्टारक ।

यशस्कर

और यह निर्वासन तुमने स्वयं ही अपने पर लादा था ?

सत्यव्रत

क्या करता, श्रीमान्, श्रीनगर और सारे काश्मीर में जितनी संपत्ति थी उसे बेच देने पर भी जब ऋण-मुक्त न हो सका, तब इस निर्वासन द्वारा धनोपार्जन करने का निश्चय किया, क्योंकि ऋण-हत्या से बड़ी और कोई हत्या मैं नहीं मानता, महाराज ।

यशस्कर

तो, लक्ष्मीदत्त को जो उद्यान तुमने दिया था, वह, उसका तुम पर जो ऋण था, उस ऋण चुकाने के निमित्त ही ?

सत्यव्रत

हाँ, महाराज, इनका भी ऋण मुझे देना था और इनके ऋण के चुकाने में ही वह उद्यान इन्हें दिया गया था, परन्तु उद्यान का कूप, एवं कूप से लगी हुई पृथ्वी नहीं दी गयी थी, वह मेरी पत्नी के निर्वाह के लिए इन्होंने स्वयं छोड़ दी थी ।

लक्ष्मीदत्त

सर्वथा मिथ्या, परमभट्टारक, उद्यान-विक्रय का जो पत्र लिखा गया है, उसे देख लिया जाय; और देख लिया जाय कि

उस विक्रय-पत्र में कूप और कूप से लगी हुई पृथ्वी के सहित उद्यान दिया गया है, अथवा नहीं।

सत्यव्रत

विक्रय-पत्र में क्या लिखा है, यह मैं नहीं जानता, क्योंकि वह मैंने पढ़ा ही नहीं।

लक्ष्मीदत्त

(ठठाकर हँसकर) बिना पढ़े ही आपने हस्ताक्षर कर दिये ?

सत्यव्रत

हाँ, परमभट्टारक, बिना पढ़े ही मैंने हस्ताक्षर किये।

लक्ष्मीदत्त

फिर मिथ्या, परमभट्टारक, एक मिथ्या बात को सिद्ध करने के लिए मनुष्य को न जाने कितनी मिथ्या बातें कहनी पड़ती हैं। श्रीमन्, बिना पढ़े कभी कोई किसी ऐसे पत्र पर हस्ताक्षर करते देखा या सुना गया है ?

सत्यव्रत

इस प्रकार बिना पढ़े हस्ताक्षर करने का कारण था, महाराज।

यशस्कर

क्या ?

सत्यव्रत

लक्ष्मीदत्तजी ने स्वयं प्रस्ताव किया था कि कूप और उसके निकट की भूमि मेरी भार्या के निर्वाह के लिये वे छोड़ देना चाहते हैं।

लक्ष्मीदत्त

यह तीसरी मिथ्या बात, परमभट्टारक।

सत्यव्रत

(ऊपर देखकर) भगवान जानता है कि मैं मिथ्या बोल रहा हूँ, या सत्य। श्रीमान्, ऐसे उदार साहूकार द्वारा लिखवाये गये विक्रय-पत्र को पढ़कर उस पर हस्ताक्षर करना मुझे इनका अपमान करना जान पड़ा। डूबते हुए को तृण का आश्रय भी बड़ा भारी आश्रय होता है। ऋण में डूबे हुए मुझे, वह कूप और पृथ्वी-खंड तृण नहीं, पोत, महान पोत से कम न जान पड़े। इनकी उस समय की उदारता मुझे किसी दैवी-वर से भी महान् दिखी। मेरा एक-एक रोम खड़ा हो गया, स्वर कंठ में रुक गया, दृष्टि आँसुओं से ढक गयी। मेरे हृदय ने, मेरी आत्मा ने न जाने कितने मूक आशीर्वाद इन्हें दिये। ऐसे......ऐसे अवसर, महाराज, इस प्रकार के पत्रों को पढ़ने के नहीं हुआ करते; कम से कम मुझे उस समय (न्यायाधीश के सामने के फैले हुए कागज़ को देखते हुए) इस पत्र के पढ़ने की सुधि ही न रही और मैंने लेखनी उठाकर चुपचाप इस पर हस्ताक्षर कर दिये।

लक्ष्मीदत्त

(ठठाकर हँसकर) हाँ, बड़े......बड़े सीधे हैं, आप, बड़े ......बड़े भोले।

सत्यव्रत

श्रीमान्, न मैं यह कहता कि मैं सीधा हूँ, न मैं यह कहता कि मैं भोला हूँ; मैंने अपने को सदा मनुष्य समझा है। जब ऋणिया था तब भी अपने को मनुष्य समझता था और आज जब ऋण से मुक्त हो गया हूँ, तब भी अपने को मनुष्य समझता हूँ। मनुष्य को ऋणी नहीं रहना चाहिए, इसीलिये पिता के ऋण को चुकाने का भी निश्चय कर, मैंने श्रीनगर और काश्मीर की

सारी संपत्ति बेचकर, अथवा साहूकारों को देकर, ऋण से मुक्त होने का यत्न किया; जब इस संपत्ति से ऋण से मुक्ति न हो सकी, तब स्वयं अपने पर देश-निर्वासन लाद, बाहर जाकर, कमाया और उस कमाई को ऋण में चुकाया। परन्तु इन बारह वर्षों के युग में एक विश्वास, एक आधार मुझे ऋण चुकाने के अतिरिक्त अन्य चिन्ताओं से निश्चिन्त किये रहा। यह विश्वास था लक्ष्मीदत्तजी की उदारता का, यह आधार था अपनी पत्नी के निर्वाह के साधन का। परन्तु......परन्तु, श्रीमान्, जब...... जब इस एक युग के पश्चात् ऋण से मुक्त होकर प्रसन्नता, अवर्णनीय प्रसन्नता से मैं यहाँ लौटा, तब......तब मैं अपनी भार्या की दशा देखकर भौंचक्का रह गया। मेरी सारी प्रसन्नता कपूर हो गयी। वह मेरी पत्नी है या उसका प्रेत; वह शरीर है, या उसकी छाया, यही मेरी समझ में न आया। कूप और उसके समीप की भूमि पर मेरी भार्या का कोई अधिकार न था। वह निराश्रय थी निराधार थी। न जाने कितने गृहों की सेविका रह चुकी थी। एक वणिक......सम्पन्न वणिक की पुत्री और पत्नी ने कभी सेवा तो की न थी। पति-वियोग और उस पर जीविका का कोई साधन नहीं, निर्वाह के लिए सेवा। उसे मैंने गौर वर्ण के स्थान पर श्याम वर्ण की पाया। हां, उसके केश अवश्य श्याम वर्ण से गौर वर्ण के हो गये थे। उसका शरीर कुचले जाने के कारण झुर्रियों वाला हो गया था और मन......मन तो सारी भावनाओं से रहित, तन को चलाने की एक कल मात्र। **(कुछ रुककर)** परमभट्टारक, लक्ष्मीदत्त जी ने वह कूप और उससे लगी हुई पृथ्वी मेरी पत्नी के निर्वाह के लिए देने का स्वयं ही प्रस्ताव किया था, अन्यथा इस निर्वासन में मैं उसे भी साथ ले

जाता। वह आर्य-महिला है, श्रीमान्, पति के संग बड़े से बड़ा कष्ट भी सहर्ष सह लेती, परन्तु जीविका के लिए साधन उपलब्ध होने के कारण यह विचार, कि ऋण-मुक्ति के मेरे शुभ-संकल्प में वह कोई बाधा न हो जाय, वह यहीं रह गयी। और...... और......(अत्यन्त करुण स्वर में) महाराज, यहाँ......यहाँ उसकी जो दशा......जो करुण दशा हुई वह......वह मैं शब्दों में कह नहीं सकता। (आँखों में आँसू भरकर) श्रीमान्, यह कूप और भूमि का प्रश्न नहीं, यह......यह प्रश्न है विश्वासघात का......घोर से घोर, अधम से अधम विश्वासघात ......

लक्ष्मीदत्त

(क्रोधसे) चुप......चुप रह......तू किस पर......किस पर विश्वासघात का दोषारोपण कर रहा है रे......तू......

यशस्कर

(लक्ष्मीदत्त से) शान्त......शान्त हो, लक्ष्मीदत्त, और (सत्यव्रत से) शान्त......शान्त हो तुम भी, सत्यव्रत। (न्यायाधीश से) उद्यान के विक्रय-पत्र में क्या लिखा है, न्यायाधीश ज्ञानादित्य ?

ज्ञानादित्य

(फैले हुए कागज़ को देखते हुए) उद्यान कूप और उससे लगी हुई भूमि के सहित दिया गया है, परमभट्टारक। यह प्रश्न श्रीमान् के सम्मुख आने के पूर्व मेरे सामने आ चुका था और मैंने विक्रय-पत्र की भली भाँति जाँच कर ली है।

[यशस्कर कोई उत्तर न देकर एक विचित्र प्रकार की खोजभरी दृष्टि से कुछ देर सत्यव्रत, कुछ देर लक्ष्मीदत्त और कुछ देर ज्ञानादित्य की ओर देखता और फिर नीची दृष्टि कर विचार-मग्न हो

जाता है। सत्यव्रत, लक्ष्मीदत्त, ज्ञानादित्य तथा सारा जनसमुदाय उत्सुकता से यशस्कर की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

यशस्कर

(कुछ देर पश्चात्) अच्छा, देखो, सत्यव्रत और लक्ष्मीदत्त, तुम्हारे प्रश्न का निर्णय तो पीछे किया जायगा; तुम लोग यथा-स्थान बैठो। मुझे इस समय एक दूसरी ही आवश्यक बात स्मरण आ गयी।

[सत्यव्रत और लक्ष्मीदत्त दूर की आसंदियों पर जाकर बैठ जाते हैं।]

यशस्कर

मुझे एक बड़े ही आवश्यक कार्य के निमित्त काश्मीर के सभी नागरिकों की नामांकित-मुद्रिकाएँ चाहिए; जो यहाँ हों, वे तो अभी दे दें।

[सब लोग उठ-उठकर अपनी-अपनी मुद्रिकाएँ उतार-उतार कर यशस्कर को देते हैं; इन्हीं में लक्ष्मीदत्त भी।]

लघु-यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—राजप्रासाद का एक निवास-कक्ष

समय—मध्याह्न के उपरान्त

[कक्ष की भित्तियों पर नील रंग है, जिस पर सुन्दर चित्र-कारी। द्वारों की चौखटों और कपाटों के श्याम काष्ठ में खुदाव एवं जाली का काम है और यत्र-तत्र हाथी दाँत लगा है। खुले हुए द्वारों से दूर पर हिम से आच्छादित शिखरों वाली पर्वत-मालाएँ दृष्टि-गोचर होती हैं, जिनके नीचे के भाग हरित वृक्षों से ढँके हुए हैं; इन वृक्षों में अधिकतर चिनार के वृक्ष हैं। हिम मध्याह्न के सूर्य की किरणों से चमक रहा है। कक्ष की छत श्याम काष्ठ के खुदाव-दार स्तंभों पर स्थित है, इन स्तंभों में भी हाथी दाँत लगा है। कक्ष की पृथ्वी पर कामदार मोटे कम्बल-वस्त्र की बिछावन है। बिछावन पर सुवर्ण मंडित तथा रत्नों से जटित अनेक 'शयन' (एक प्रकार के सोफ़े) और अनेक आसंदियाँ रखी हुई हैं। इन पर कामदार कौशेय वस्त्र से ढँकी हुई गद्दियाँ बिछी हैं तथा तकिये लगे हैं। यत्र-तत्र अनेक सुवर्ण और रजत की चौकियाँ रखी हैं, जिन पर विविध प्रकार की वस्तुएँ सजी हैं। यशस्कर एक शयन पर बैठा हुआ है। उसके निकट की एक सुवर्ण की चौकी पर अनेक मुद्रिकाएँ रखी हैं। यशस्कर के पास ही सेवाश्रय खड़ा है।]

यशस्कर

सेवाश्रय, तुम जानते हो, तुमसे अधिक विश्वास-पात्र मेरा कोई अन्य भृत्य नहीं है।

सेवाश्रय

भली भाँति जानता हूँ, परमभट्टारक।

यशस्कर

इसीलिए तुमसे कहता हूँ। मेरा विश्वास है कि सत्यव्रत सच्चा और लक्ष्मीदत्त झूठा है।

सेवाश्रय

ऐसा, महाराज ?

यशस्कर

हाँ, परन्तु मन में यह समझते हुए भी, विक्रय-पत्र के सामने रहते मैं सत्यव्रत को जिता न सकता था। सत्यव्रत की सत्यता का कोई न कोई प्रमाण आवश्यक है, और मेरा अनुमान है कि विक्रय-पत्र के लिखे जाने वाले वर्ष का, लक्ष्मीदत्त के घर का चिट्ठा यदि मिल जाय तो कोई न कोई ऐसा प्रमाण मिल जायगा, जिससे सत्यव्रत की सचाई सिद्ध हो सकेगी। **(कुछ रुककर)** इन वणिकों के यहाँ न जाने कितने युगों के चिट्ठे तो सुरक्षित रखे ही जाते हैं !

सेवाश्रय

हाँ, श्रीमान् ?

यशस्कर

इसीलिए मैंने बाह्यालय में सभी की नामाङ्कित मुद्रिकाएँ माँगी। **(चौकी पर पड़ी मुद्रिकाओं में से एक उठाकर)** लक्ष्मीदत्त की यह मुद्रिका है। इसे लेकर, तत्काल तुम उसके कायस्थ को

दिखा, यह कहो कि लक्ष्मीदत्त बाह्यालय में बारह वर्ष पूर्व का अपना चिट्ठा मँगा रहा है। बाह्यालय से मेरे लौटने तक कोई न जाए, यह आज्ञा तो मैं दे ही आया हूँ। उस चिट्ठे को तुम इसी कक्ष में लाओ। उसे देखकर तब आगे की कार्यवाही निश्चित की जायगी।

सेवाश्रय

आज्ञा का अक्षरशः पालन होगा, परमभट्टारक।

यशस्कर

देखो, सारे कार्य में अत्यन्त सावधानी का रहना आवश्यक है।

सेवाश्रय

इस सम्बन्ध में श्रीमान् सर्वथा निश्चिन्त रहें।

[यशस्कर मुद्रिका सेवाश्रय को देता है, जिसे वह अत्यधिक विनम्रता से झुक कर लेता है।]

लघु-यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—राजप्रासाद का एक निवास-कक्ष

समय—अपराह्न

[दृश्य वही है जो दूसरे दृश्य में था। यशस्कर एक शयन पर बैठा हुआ एक प्राचीन ढंग की मोटी-सी बही को खोले हुए ध्यान से देख रहा है; सेवाश्रय उत्कंठित दृष्टि से यशस्कर की ओर।]

यशस्कर

(कुछ देर पश्चात्, एकाएक हर्ष से) मिल जायगा, सेवाश्रय, सत्यव्रत के सचाई का प्रमाण मिल जायगा।

सेवाश्रय

ऐसा, परमभट्टारक ?

यशस्कर

हाँ, (सिर उठाकर) इस चिट्ठे में लेखराज नामक व्यक्ति को विक्रय-पत्र लिखवाने का बहुत अधिक पारिश्रमिक दिया गया लिखा है। किसी लेखक को किसी ऐसे पत्र के लिखने के लिए इतना अधिक पारिश्रमिक दिया गया मैंने कभी सुना ही नहीं। फिर यह पारिश्रमिक दिया गया है विक्रय-पत्र लिखने के बहुत दिनों पश्चात्। (कुछ रुककर) तुम लेखराज को जानते हो ?

सेवाश्रय

भली भाँति, श्रीमान्।

यशस्कर

उसे तत्काल यहाँ उपस्थित करो।

सेवाश्रय

जो आज्ञा, महाराज।

[सेवाश्रय का प्रणाम कर प्रस्थान। यशस्कर उठकर इधर उधर टहलता है।]

लघु-यवनिका

चौथा दृश्य

स्थान—श्रीनगर के राजप्रासाद का बाह्यालय

समय—सन्ध्या

[दृश्य वैसा ही है जैसा पहले दृश्य में था। यशस्कर सिंहासन पर बैठा हुआ है; ज्ञानादित्य उसके सामने की आसंदी पर। सेवा-श्रय अपने स्थान पर खड़ा है। सत्यव्रत और लक्ष्मीदत्त भी जहाँ पहले खड़े थे, वहीं खड़े हैं। इन्हीं के निकट खड़ा है लेखराज। लेखराज की अवस्था पचास वर्ष के लगभग है। वह गौर वर्ण का दुबला-पतला मनुष्य है। वेष-भूषा तथा आभूषण अन्य लोगों के सदृश हैं। बाह्यालय और चैत्य में उसी प्रकार की भीड़ है, जैसी पहले दृश्य में थी।]

यशस्कर

हाँ, तुम्हारा अपराध क्षमा कर दिया गया, लेखराज, तुम (ज्ञानादित्य के सामने की चौकी पर फैले हुए कागज़ की ओर संकेत कर) इस विक्रय-पत्र का सच्चा रहस्य बता दो।

लेखराज

(अत्यधिक नम्रता से) श्रीमान् कूप और उसके समीप की भूमि से 'रहित' के स्थान पर 'सहित' लोभवश मैंने किया है। जिस समय विक्रय-पत्र लिखा गया उस समय 'रहित' शब्द ही था। सत्यव्रत के काश्मीर छोड़ने के पश्चात् 'रहित' का 'सहित' लक्ष्मी-

दत्त जी की आज्ञा से बनाया गया है।

लक्ष्मीदत्त

मिथ्या, श्रीमान्, यह व्यक्ति भी मिथ्या.........

यशस्कर

(क्रोध से गरजकर) सत्यव्रत भी झूठा। लेखराज भी मिथ्या-भाषी। सत्यवादी तो तुम ही हो, लक्ष्मीदत्त। **(कुछ रुककर)** लक्ष्मीदत्त, तुमने साधारण अपराध नहीं किया है। तुमने सत्यव्रत को ठगा, इतना ही नहीं, विक्रय-पत्र को ही इस प्रकार लिखवाया कि एक छोटे से परिवर्तन से उसका अर्थ ही उलट जाय। सत्यव्रत ने अपनी स्वाभाविक उदारता के कारण विक्रय-पत्र को पढ़ा ही नहीं, परन्तु यदि वह पढ़ता भी तो भी परिस्थित में कोई परिवर्तन न होता; उस समय तो वहाँ 'रहित' शब्द ही था; 'रहित' का 'सहित' तो सत्यव्रत के काश्मीर छोड़ने के पश्चात् किया गया। तुम्हारे मन में बुरी भावना विक्रय-पत्र के लिखे जाने के समय ही थी; अन्यथा विक्रय-पत्र के लिखने का यह ढँग ही न होता; 'रहित' और 'सहित' शब्दों का इस प्रकार प्रयोग ही न किया जाता; पत्र ही दूसरी प्रकार लिखा जाता। **(फिर कुछ रुककर)** कदाचित् तुम्हारी बुरी भावना उस कूप और उससे लगी हुई भूमि तुम सत्यव्रत की भार्या के निर्वाह के लिए छोड़ दोगे, इस प्रस्ताव के समय ही थी **(एकाएक रुककर)** नहीं, नहीं, यह प्रस्ताव ही इसलिये किया गया था, जिससे वह उद्यान उस कूप और उसके समीप की भूमि के सहित तुम्हें किसी प्रकार मिल जाय। जिस बात को सत्यव्रत ने तुम्हारी उदारता समझा, वह यथार्थ में तुम्हारी विश्वास-घातता थी। तुमने किसी साधारण व्यक्ति से विश्वासघात किया, यह नहीं, कष्ट में पड़े हुए एक व्यक्ति से

विश्वासघात किया है । वह तुम्हारी उदारता के विश्वास पर, तुम्हारे भरोसे पर, अपनी पत्नी को यहीं रख, देश छोड़कर चला गया, उस समय तुमने उससे विश्वासघात किया । तुम्हारी इस कृति से एक पतिपरायणा साध्वी स्त्री को अपरमित कष्ट हुए । मेरे सामने तुम झूठ बोले । एक नहीं दो दो सत्य-वक्ताओं को तुमने मिथ्या-भाषी कहा । लक्ष्मीदत्त, तुमने घोर.........घोरतम अपराध किया है । तुमने अपने को ही नहीं, अपने कुल को अपने समुदाय को, अपनी जाति को और मेरे राज्य तक को कलंकित किया है । मैं तो यह मानता हूँ कि ऐसा व्यक्ति स्वयं ही नहीं, पर जिस कुल, जिस समुदाय, जिस जाति और जिस राज्य में ऐसा व्यक्ति होता है, वे तक कलंकित होते हैं । तुम्हारे इस अपराध के लिए तुम्हें राज्य से निष्कासन का दण्ड दिया जाता है ।

चैत्य में खड़े हुए कुछ मनुष्य—धन्य है ! धन्य है !

समस्त जन-समुदाय—परमभट्टारक परमेश्वर महाराजाधिराज श्री यशस्कर देव की जय !

यशस्कर

एक दण्ड और । तुमने विश्वासघात कर सत्यव्रत की पत्नी की पृथ्वी हरण की, अतः तुम्हारा गृह हरण कर उसे दिया जायगा ।

कुछ मनुष्य

धन्य है ! धन्य है !

जन-समुदाय

परमभट्टारक परमेश्वर महाराजाधिराज न्यायपरायण श्री यशस्कर देव की जय !

यशस्कर

(न्यायाधीश से) ज्ञानादित्य जी, न्याय के लिए केवल क्रय-

विक्रय-पत्र, साक्षियाँ इत्यादि ही यथेष्ठ नहीं, परन्तु.........
परन्तु इनके अतिरिक्त अन्य बातों की भी आवश्यकता होती है और इनमें.........इनमें मुख्य है इस बात की पहचान कि कौन सच्चा है और कौन झूठा तथा यह जाना जाता है एक विशेष प्रकार की दृष्टि से, जो न जाने किस प्रकार.........किस प्रकार मनुष्य के अन्तर्तम तक प्रवेश कर सकती है।

[पुनः जय-जयकार होता है ।]

यवनिका

अट्ठानवे किसे ?

(एक ऐतिहासिक एकांकी)

मुख्य पात्र—

यशस्कर	::	::	काश्मीर का राजा
देवराज	::	::	एक नागरिक
अपाधीश	::	::	एक नागरिक

पहला दृश्य

स्थान—काश्मीर में श्रीनगर के निकट एक उद्यान

समय—प्रातःकाल

[एक झील के किनारे उद्यान का एक भाग दिखायी देता है। एक ओर झील का कुछ भाग दिखता है और दूसरी ओर उद्यान का; दोनों की पृष्ठ-भूमि में पर्वत-मालाएँ, जो विविध रंगों के पुष्पों से लदे हुए वृक्षों से आच्छादित हैं। इन वृक्षों का प्रतिबिंब झील में पड़ रहा है। झील के किनारे भी सघन वृक्ष हैं। उद्यान फलों के वृक्षों से भरा हुआ है। इनमें सेव, अखरोट, बादाम आदि के वृक्षों की बहुतायत है। इन वृक्षों की शाखाएँ फलों के बोझ से झुकी हुई हैं। वृक्षों के बीच में एक कूप का कुछ भाग दिख पड़ता है। कूप का पानी निकालने के लिए उसमें रहट का प्रबन्ध है। देवराज कूप के निकट खड़ा हुआ है। देवराज अधेड़ अवस्था और गौर वर्ण का ऊँचा-पूरा, बलिष्ट व्यक्ति है। सिर पर लंबे बाल हैं और बड़ी-बड़ी मूछें। बाल यत्र-तत्र श्वेत हो गये हैं। उसका सिर नंगा है। उसके ऊपर के शरीर को कम्बल-वस्त्र (एक प्रकार का ऊनी कपड़ा) ढाँके हुए है। यह कपड़ा भुजाओं के नीचे पसवाड़ों तथा कटि में एक विशेष ढँग से बँधा है, जिसके ऊपर का सारा शरीर ढँक गया है। और वस्त्र के छोर दाहनी ओर लटक रहे हैं। नीचे के शरीर पर वह सूती अधोवस्त्र (धोती) पहने है।

उसके पैरों में चर्म के जूते हैं। शरीर पर कोई आभूषण नहीं है। वह अत्यंत उद्विग्न दिखायी पड़ता है और इस उद्विग्न अवस्था में कूप से ही कुछ कह रहा है।]

देवराज

महाराजा यशस्कर के राज्य में मनुष्य चोरी नहीं करते...... अरे ! कर ही नहीं सकते।......यशस्कर महाराज के न्याय का यश राज्य में ही नहीं, परन्तु राज्य के बाहर भी दसों-दिशाओं में व्याप्त है, फिर किसका साहस जो यहाँ चोरी करे ?......किन्तु रे कूप ! तू......तू मनुष्य नहीं......अरे ! कोई जीवधारी भी नहीं......तब तुझे......तुझे राजा यशस्कर का क्या भय ? **(कुछ रुककर)** पर नहीं नहीं, मैं......मैं भूलता हूँ। तूने......तूने जो दुष्कर्म किया है, मेरे चार वर्षों......पूरे चार वर्षों की कमाई को......उन सौ सुवर्ण मुद्राओं को जो तू लील गया है, वह तू पचा न सकेगा; यशस्कर महाराज तेरे नीर की एक-एक बूँद को सुखवा देंगे। तेरे एक-एक शिलाखंड को उखड़वा-उखड़वा कर धूल में मिलवा देंगे। **(कुछ रुककर)** हाय ! हाय ! कितने परिश्रम......कितना स्वेद बहा......कहाँ-कहाँ......और किस-किस प्रकार मैंने ये सौ स्वर्ण मुद्राएँ कमायी थीं। कहाँ-कहाँ भटका था ? क्या-क्या किया था ? किस प्रसन्नता से घर लौट रहा था ! **(कुछ रुककर)** नरदेव, हाँ, नरदेव, अब सात वर्ष का हुआ होगा। जब श्रीनगर छोड़ा तब वह तीन वर्ष का था। अब तो वह सब समझता होगा। कितना......कितना प्रसन्न होता वह उन चमकती हुई मुद्राओं को देखकर। **(फिर कुछ रुककर)** और...... और उसकी माँ ? आह ! उसने......उसने तो न जाने ये चार वर्ष किस प्रकार......किस-किस देवी-देवता को मना-मनाकर

......कौन-कौन से व्रत और अनुष्ठान कर-कर बिताये होंगे। जब वह......वह मुझे उन सौ सुवर्ण मुद्राओं के साथ देखती तब कितना......कितना हर्ष होता उसे ? **(फिर कुछ रुककर)** उसने जीवन भर में सौ क्या एक स्वर्ण मुद्रा भी नहीं देखी। निर्धनता के कितने कष्ट उठाये हैं उसने ? **(कुछ रुककर)** कैसे घर में वह रही ? कैसे वस्त्र उसने पहने ? कैसा भोजन करती थी वह ? जब से......जब से बच्चा हुआ तब से......तब से तो उसके क्लेश और भी......अरे ! कहीं बढ़ गये थे। भगवान् निर्धन किसी को न बनावे और किसी गृहस्थ को तो कभी नहीं। **(कुछ रुककर)** वह सारा कष्ट......बीता हुआ वह सारा कष्ट दूर होने का अवसर आया था और......और क्लेश......महान् क्लेश के पश्चात् जो सुख मिलता है वह......वह कितना......कितना सुखद जान पड़ता है ? **(कुछ रुककर)** पर हाय ! हाय ! यह क्या ......यह क्या हुआ ? जब कष्ट-निवारण की घड़ी उपस्थित हुई, जब दुख-समुद्र का किनारा दिखा, और उस किनारे पर उस समुद्र से कहीं बड़ा, कहीं निस्सीम सुख संसार,......तब......तब यह अपहरण ! **(फिर कुछ रुककर)** हाय ! ऐसे अवसर......क्लेश-काल के बीत जाने और सुख-समय के आरंभ के अवसर पर यह नया वज्रपात ! ऐसे......ऐसे अवसर का दुःख कितना...... कितना होता है, उसे तो वही......हाय ! हाय ! वही जान सकता है जिसने उसे भोगा है। **(फिर कुछ रुककर)** तू......तू उसे क्या जाने रे निर्जीव कूप !

[देवराज रोने लगता है एक ओर से अपाधीश का प्रवेश। वह युवावस्था और गौर वर्ण का, ऊँचा-पूरा सुन्दर व्यक्ति है। वेष-भूषा देवराज के सदृश ही है।]

अपाधीश

(देवराज के निकट आकर) तुम कौन हो; महानुभाव ? क्यों इस प्रकार विलाप कर रहे हो ? महाराजा यशस्कर के राज्य में ऐसा विलाप ! आश्चर्य की बात है, बन्धु !

देवराज

(आँसू पोंछते हुए) मन्द-भागी के लिए सभी स्थान और सब राज्य एक से होते हैं, बन्धु ।

अपाधीश

पर कोई हानि न हो तो मुझे इस विलाप का कारण तो बताओ; कदाचित् मैं कोई सहायता कर सकूँ ।

देवराज

महानुभाव, मेरी सारी कमाई, मेरा सर्वस्व इस कूप ने भक्षण कर लिया, यही मेरे विलाप का कारण है ।

अपाधीश

इस कूप ने भक्षण कर लिया ! निर्जीव कूप कुछ भक्षण कर गया, मैं समझा नहीं, महानुभाव । अपनी कथा कुछ स्पष्ट कहो न ।

देवराज

कोई लंबी कथा नहीं है, बन्धु, पर सुन लो । मैं इसी राज्य का एक नागरिक हूँ । चार वर्ष के पूर्व द्रव्योपार्जन के निमित्त परदेश गया था । सौ स्वर्ण मुद्राएँ कमा यहाँ लौटा । इस कूप पर स्नान कर, घर जाने का निश्चय कर, वस्त्र उतारने का विचार कर रहा था । पहले कटि में बँधी हुई थैली को खोला, पर वह हाथ से छूट इस कूप में जा गिरी । यही, बन्धु, यही मेरी छोटी-सी कथा है । मेरा सर्वस्व चला गया, महानुभाव, सर्वस्व ।

अपाधीश

बस इतनी-सी बात है। इतनी-सी बात पर यह आकाश-पाताल एक करने का विलाप !

देवराज

(आश्चर्य से) इतनी-सी बात! यह छोटी बात है, बन्धु। वह धन निर्धन का धन था। तुम सम्पन्न जान पड़ते हो, इसीलिए इस बात को इतनी-सी बात कहते हो।

अपाधीश

मैं भी सम्पन्न नहीं हूँ, महानिर्धन हूँ, महानुभाव, परन्तु उस थैली को इस कूप से निकाल सकता हूँ, इसीलिए इस बात को बड़ी बात नहीं समझता।

देवराज

(प्रसन्नता से) तुम उस थैली को इस अथाह जल के कूप से निकाल सकते हो ?

अपाधीश

तत्काल, पर यह बताओ कि यदि मैंने थैली निकाल दी तो मुझे उसमें से क्या दोगे ?

देवराज

क्या दूँगा ? **(विचारते हुए)** मैं तुम्हीं पर छोड़ता हूँ, बन्धु, जो तुम्हारी इच्छा हो, तुम ले लेना और जो चाहे वह मुझे दे देना।

अपाधीश

(कुछ विचार कर) अच्छी बात है।

[अपाधीश ऊपर के शरीर पर के वस्त्र को उतार कर कुए में उतरता है। देवराज कुए पर चढ़कर—उत्सुकता से उसके भीतर

देखता है। कुछ देर में आपाद-मस्तक भींगा हुआ अपाधीश हाथ में थैली लिए धीरे-धीरे कुए के बाहर निकलता है।]

अपाधीश

(थैली देवराज को दिखाते हुए) यही तुम्हारी थैली है ?

देवराज

(अत्यधिक प्रसन्नता से) हाँ, यही........यही निर्धन का धन है।

अपाधीश

(थैली खोल उसमें से दो मुद्राएँ निकाल कर उन्हें देवराज को देते हुए) यह लो।

देवराज

(आश्चर्य से) अर्थात् ?

अपाधीश

अट्ठानवे मेरी और दो तुम्हारी।

देवराज

(और आश्चर्य से) अट्ठानवे तुम्हारी और दो मेरी ! मैं समझा नहीं, बन्धु।

अपाधीश

तुम समझे नहीं ? अरे! इतने शीघ्र भूल गये ? तुम्हीं ने तो कहा था न कि यदि मैं थैली निकाल लूँ तो जो मेरी इच्छा हो वह मैं ले लूँ और जो मैं चाहूँ तुम्हें दे दूँ।

देवराज

हाँ, यह तो......यह तो मैंने कहा था, पर इसका यह अर्थ......यह अर्थ तो नहीं हो सकता।

अपाधीश

यह अर्थ नहीं हो सकता ? तो......तो क्या अर्थ हो सकता है ? पूरे वाक्य का एक-एक शब्द और एक एक मात्रा मुझे स्मरण है। कांप देख लो। जो शब्द तुमने कहे हैं उनसे बने हुए वाक्य का और कोई अर्थ हो सकता है क्या ? **(दो मुद्राएँ देने के लिए हाथ बढ़ाते हुए)** लो......ले लो। **(जब देवराज नहीं लेता तब उन मुद्राओं को कुए पर रखते हुए)** अच्छी बात है, नहीं लेते हो तो न लो। तुम्हारा भाग रखकर मैं चला। **(अपने कम्बल वस्त्र को उठाता है।)**

देवराज

(मानों किसी तन्द्रा से जगा हो) यह अन्याय.........घोर अन्याय है। इसका निपटारा तो अब महाराजा यशस्कर ही करेंगे।

अपाधीश

(जाते हुए) हाँ, हाँ, वे करें। न्याय तो न्याय ही होगा। वे मुझे बुलाएँगे तो मैं उपस्थित हो जाऊँगा। मैं भाग नहीं रहा हूँ। मेरा नाम और पता तुम्हें बता देता हूँ। मेरा नाम है अपाधीश और मैं विजयेश्वर के पथ में रहता हूँ। वहाँ कोई भी मेरा घर बता देगा **(प्रस्थान)**

देवराज

(जिस ओर अपाधीश गया है उसी ओर देखते-देखते, कुछ देर पश्चात्) अपा......अपाधीश। विजयेश्वर......विजयेश्वर का पथ......

[शून्य दृष्टि से सामने की ओर देखता है]

लघु-यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—श्रीनगर में राजप्रासाद का बाह्यालय

समय—मध्याह्न

[बाह्यालय (दीवाने आम) अत्यन्त विशाल आलय है। भित्तियाँ पाषाण की हैं, जिनमें नाना प्रकार की सुन्दर मूर्तियाँ खुदी हुई हैं। भित्तियों में बड़े-बड़े द्वार हैं, जिनकी चौखटों और किवाड़ों में खुदाव का काम है और यत्र-तत्र हाथी दाँत लगा हुआ है। खुले हुए द्वारों से दूर पर हिमाच्छादित शिखरों वाली पर्वत-मालाएँ दृष्टिगोचर होती हैं, जिनका हिम माध्याह्न के सूर्य की किरणों से चमक रहा है। ऊँचे-ऊँचे शिखरों के नीचे पर्वत-प्रदेश वृक्षों से भरा हुआ है; इनमें अधिकतर चिनार के वृक्ष हैं। पाषाण के स्थूल खुदावदार स्तम्भों पर आलय की छत है। आलय की पृथ्वी पर पाषाण का ही चिकना पटाव है। आलय के एक ओर चैत्य का कुछ भाग दिखाई देता है। बीच में रत्न-जटित स्वर्ण का सिंहासन रखा हुआ है और उसके सामने, उसकी ओर जिनका मुख है, ऐसी, रत्नों से जड़ी हुई सुवर्ण की अनेक आसंदियाँ (बैठने की चौकियाँ) रखी हैं। सिंहासन और आसंदियों पर कामदार कौशेय वस्त्रों से ढँकी हुई गद्दियाँ बिछी हैं और उन पर तकिये लगे हैं। अनेक ऊँची-ऊँची रजत की धूपदानियों से सुगन्धित धूम्र उठ रहा है। सिंहासन पर यशस्कर बैठा हुआ है। यशस्कर अधेड़

अवस्था का गौरवर्ण, ऊँचा-पूरा, सुन्दर व्यक्ति है। सँवारे हुए लम्बे केश और ऊपर को चढ़ी हुई बड़ी-बड़ी मूँछें हैं। सारे बाल काले हैं। बालों में सामने की ओर अर्द्धचन्द्राकार श्वेत पुष्पों की माला बँधी हुई है। ऊपर के शरीर को नीलवर्ण का कामदार कराल-वस्त्र (एक प्रकार का बहुमूल्य ऊनी कपड़ा) ढाँके हुए है। यह वस्त्र भुजाओं के नीचे पसवाड़ों तथा कटि में एक विशेष ढँग से बँधा है। इस वस्त्र के छोर दाहनी ओर लटक रहे हैं। नीचे के शरीर पर वह श्वेत रंग का कौशेय वस्त्र धारण किये है। उसके कानों में कुण्डल, गले में हार, भुजाओं पर केयूर, हाथों में वलय और उँगलियों में मुद्रिकाएँ हैं। सारे आभूषण स्वर्ण के हैं और रत्नों से देदीप्यमान। रत्न-जटित भूषणों के अतिरिक्त उसके गले में लम्बी पुष्पमाला भी है। उसके मस्तक पर केशर का त्रिपुण्ड है। कौशेय-वस्त्रों तथा आभूषणों से सुसज्जित तीन युवतियाँ सिंहासन के पीछे खड़ी हैं। एक यशस्कर के सिर पर हाथीदाँत की डाँड़ी का कौशेय-वस्त्र का श्वेत छत्र लगाये है, जिसमें मोतियों की झालर लगी है और दो युवतियाँ यशस्कर पर सोने की डाँड़ी के सुरागाय की पूछों के श्वेत चामर डुला रही हैं। सिंहासन के सामने देवराज और अपाधीश अपनी साधारण वेष-भूषा में खड़े हुए हैं। आलय की आसंदियों पर राजपुत्र (राजा के नातेदार) सामन्तगण (राजकर्मचारी) प्रतिष्ठित नागरिक इत्यादि बैठे हैं। चैत्य में अन्य नागरिक खड़े हुए हैं। वर्ण सभी का गौर है और वेष-भूषा देवराज अपाधीश आदि के सदृश।]

यशस्कर

(देवराज से) परन्तु अपाधीश का यह कथन क्या सत्य है कि तुमने थैली निकालने के पहले इनसे कह दिया था कि उसमें से

जो उनकी इच्छा हो वह ये लेकर जो चाहें वह तुम्हें दे दे ? **(कुछ रुककर)** समझ-बूझकर उत्तर देना, देवराज। इनके और तुम्हारे अतिरिक्त वहाँ दूसरा कोई न था, इस बात को अपाधीश भी स्वीकृत करता है अतः तुम दोनों वादी-प्रतिवादी ही नहीं, पर साक्षी भी हो।

देवराज

(भर्राये हुए स्वर से) मैं जानता हूँ, परमभट्टारक, कि इस समय मेरे कथन का मेरे लिए कितना बड़ा मूल्य है, परन्तु श्रीमान्, ऐसे राजा के राज्य का नागरिक मिथ्याभाषी नहीं हो सकता। यह सत्य है, महाराज, कि थैली निकालने के पूर्व मैंने इनसे कह दिया था कि इसमें से जो इनकी इच्छा हो वह ये रख, जो चाहें, मुझे दे दे......परन्तु......परन्तु...**(चुप हो जाता है। और मस्तक झुका लेता है।)**

यशस्कर

परन्तु पर रुक क्यों गये, देवराज, जो कुछ तुम्हें और कहना हो वह भी कह सकते हो।

देवराज

(धीरे-धीरे सिर उठाकर) मुझे और कुछ नहीं कहना है, परम-भट्टारक। **(फिर सिर झुका लेता है।)**

यशस्कर

तुम और कुछ कहना चाहते हो अपाधीश ?

अपाधीश

मुझे और क्या कहना है, परमभट्टारक। श्रीमान् ने स्वयं देख लिया कि मैंने एक-एक शब्द, महाराज की सेवा में सत्य निवेदन किया है।

[कुछ देर तक कोई कुछ नहीं बोलता। यशस्कर विचार-मग्न रहता है। सभी लोग उत्सुकता से यशस्कर की ओर देखते रहते हैं।]

यशस्कर

(कुछ देर पश्चात्) तुम दोनो सत्यवादी हो। **(अपाधीश से)** देवराज के कथनानुसार तुम अट्ठानवे मुद्राएँ स्वयं रख कर दो ही देवराज को दे सकते हो। **(देवराज से)** देवराज, उस स्थल पर तुम दोनों के अतिरिक्त और किसी के उपस्थित न रहने के कारण तुम मिथ्या-भाषण भी कर सकते थे और यदि तुम यह कह देते कि तुमने अपाधीश को केवल इसका-इतना पारिश्रमिक देना स्वीकार किया था, तो तुम्हारी वह बात सत्य ही मानी भी जाती। किन्तु निर्धन होते हुए भी, चार वर्षों तक अत्यधिक परिश्रम करने के पश्चात् भी जो कमाई तुमने की, उसकी रक्षा के लिए तुमने मिथ्या की शरण नहीं ली। **(कुछ रुककर दोनों से)** ऐसे प्रसंगो पर न्याय करने के लिए शब्दों को नहीं, भावना को महत्व रहता है। **(अपाधीश से)** अपाधीश, तुमसे जब देवराज ने यह कहा कि थैली में जो चाहे तुम रखकर उन्हें शेष दे देना, उस समय उनकी क्या भावना थी उस पर विचार करना होगा। **(कुछ रुककर)** इसलिए मेरा निर्णय है कि अट्ठानवे मुद्राएँ तुम्हें और दो देवराज को नहीं किन्तु दो तुम्हें और अट्ठानवे—देवराज को मिलेंगी।

[वाद्यालय जयजयकार से गूँज उठता है।]

यवनिका

समाप्त

महाराज

(दो भागों में एक सामाजिक नाटक)

पूर्वार्द्ध

मुख्य पात्र—

महाराज	::	::	::	एक ब्राह्मण
राजा	::	::	::	एक क्षत्रिय
समय	::	::	अभी से सैकड़ों वर्ष पूर्व	

ए
का
द
शी

स्थान—एक हिन्दू-रसोईघर

समय—मध्याह्न

[तीन ओर की दीवालें दिखती हैं। पीछे की दीवाल से सटा हुआ एक छोटा-सा चबूतरा दिखायी देता है। इस चबूतरे के एक तरफ़ एक चूल्हा बना हुआ है। दाहनी और बाईं दीवालों के सिरों पर एक-एक दरवाज़ा है, जिनके लकड़ी के किवाड़ बन्द हैं। छत पर पत्थर का पटाव है और ज़मीन गोबर से लिपी है। महाराज चबूतरे पर खड़ा हुआ है। महाराज की अवस्था करीब चालीस वर्ष की है। वह गौर वर्ण का, ऊँचा-पूरा साधारण शरीर का व्यक्ति है। सिर पर गोखुर के नाप की चौड़ी शिखा है। शिखा के सिवा सिर के तथा मूँछों दाढ़ी के बाल मुँड़े हुए हैं। मस्तक पर भस्म का त्रिपुण्ड है। ऊपर का शरीर नंगा है, जिस पर यत्र-तत्र भस्म के त्रिपुण्ड दीख पड़ते हैं और बाएँ कन्धे से कमर तक एक मोटा यज्ञोपवीत। नीचे के शरीर पर लाल रंग का सोला है। उसके बाएँ हाथ में ताँबे का एक कलश है और दाहने हाथ में एक कुश। कुश को कलश में डाल-डालकर वह चबूतरे की पृथ्वी का मार्जन कर रहा है। उसकी काष्ठ की पादुकाएँ चबूतरे के नीचे उतरी हुई हैं।]

महाराज

ॐ आपो हिष्टा मयो भुवः
ॐ तान उर्जे दधातन ॐ महेरणाय चक्षसे
ॐ योवः शिवतमोरसः ॐ तस्य भाजयते हनः
ॐ उशतीरिव मातरः ॐ तस्माऽअरंग भामवः
ॐ यस्यक्षयाय जिन्वथ ॐ आपोज न यथा चनः

(मार्जन करने के बाद ऊँचे स्वर में) हाँ, राजन ! अब आप आ सकते हैं।

[दाहनी ओर की दीवाल के दरवाज़े को खोल राजा का प्रवेश। राजा की अवस्था महाराज के बराबर ही है। वह गेहुँएँ रंग का, ऊँचा-पूरा और मोटा व्यक्ति है। सिर पर लम्बे बाल हैं, जिस पर किरीट लगा है। मस्तक पर केशर का त्रिपुण्ड है और मुख पर बड़ी-बड़ी मूँछें तथा चढ़ी हुई दाढ़ी। शरीर पर घेरदार जामा और उत्तरीय धारण है। कानों में कुण्डल, गले में हार, भुजाओं पर भुजबन्द, हाथों में कड़े और उँगलियों में अँगूठियाँ हैं।]

महाराज

(पास आते हुए राजा से) चौतरे के नीचे, हाँ, चौतरे के नीचे ही रहिएगा, राजन; आप राजा हैं, इसमें सन्देह नहीं, पर क्षत्रिय हैं, ब्राह्मण नहीं। चारो वर्णों में ब्राह्मण का वर्ण सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि वह भगवान् ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुआ है। परन्तु जन्म के पश्चात् शारीरिक और मानसिक श्रेष्ठता रखने के निमित्त भोजन की ओर सबसे अधिक लक्ष्य रखना चाहिए। पय-पान की अवस्था तक भोजन में विशेष विचार की आवश्यकता नहीं होती। अन्न-प्राशन के पश्चात् ही इस विचार का आरंभ हो जाता है और उपनयन होते ही तो पूर्ण विवेक अनिवार्य है। जैसा भोजन वैसा

शरीर, मन और बुद्धि। उपनयन के पश्चात् आज पर्यन्त अपने भोजन के लिए मैंने स्वयं भोजन की सामग्री निश्चित की है, उसे स्वयं सिद्ध किया है और किसी को छूने तक नहीं दिया। मैंने स्वयं अपने चौके की पृथ्वी का मार्जन किया है, अग्नि जलाई है; भोजन बनाया है और खाया है। राजन, स्पर्श-दोष से बड़ा कोई दोष नहीं।

राजा

ऐसा, महाराज ?

महाराज

हाँ, राजन। जो जैसा होता है, उसके स्पर्श के वैसे ही गुण-दोष होते हैं। आप क्षत्रिय हैं, राजा हैं, नरों में श्रेष्ठ पर, आप रजोगुण-प्रधान हैं, वैश्य भी रजोगुण-प्रधान और शूद्र तो तमोगुण-प्रधान। ब्राह्मण नरश्रेष्ठ नहीं, भू-सुर है, इसीलिए आप राजा कहे जाते हैं पर ब्राह्मण महाराज। ब्राह्मण सतोगुण-प्रधान है। उसके स्वाभाविक कर्मों के संबंध में भगवान् स्वयं संसार की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक गीता में कहते हैं—

'शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेवच।

ज्ञानंविज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्म कर्म स्वभावजम्॥'

उसका भोजन यदि रजोगुण अथवा तमोगुण-प्रधान व्यक्ति छू लेगा तो वह भोजन सात्विक कैसे रह जायगा ? ऐसे भोजन को कर ब्राह्मण अपने स्वाभाविक कर्म कैसे करेगा ?

राजा

हाँ, जो भोजन सात्विक नहीं रह जायगा वह सतोगुण के स्थान पर रजोगुण और तमोगुण की उत्पत्ति करेगा, महाराज, क्यों ?

महाराज

(प्रसन्नता से) कैसी ठीक बात कही है आपने; पर कठिनाई तो यह है राजन्, कि ब्राह्मण भी इसे नहीं समझते। मैं कहता हूँ यदि वे सच्चे भू-सुर होना चाहते हैं, सच्चे महाराज तो उन्हें, जन्म के पश्चात् जिस भोजन से शरीर और मन बनता है, उसकी शुद्धता, परम शुद्धता और इसके लिए स्पर्शा-स्पर्श का पूर्ण ध्यान रखना आवश्यक ही नहीं—अनिवार्य है।

राजा

(विचारते हुए) इस सम्बन्ध में यदि राज-नियम बना दिये जायँ तो ?

महाराज

(विचारते हुए) नहीं, नहीं, इसकी आवश्यकता न पड़ेगी। ब्राह्मणों की कुछ निर्बलताओं ने उनका ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। अनेक मानने लगे हैं कि यदि वे नरों से देवता नहीं हो पाये हैं, सच्चे भू-सुर नहीं बन सके हैं, तो इसका प्रधान कारण भोजन में अविवेक है। स्पर्शा-स्पर्श में ध्यान की कमी है। इसे और अच्छी प्रकार समझ लेने तथा इस ज्ञान को कार्यरूप में परिणत करते ही वे महाराज, सच्चे महाराज बन जायँगे। **(कुछ रुककर)** अच्छा, अब आप दासों को आज्ञा दें कि पहले अग्नि लावें, उसके पश्चात् जल, और उसके पश्चात् भोज्य-सामग्री, परन्तु वे और वह सामग्री इस चौतरे के नीचे ही रहे, चौतरे की पृथ्वी का कोई स्पर्श न करे।

राजा

(बाईं दीवार के दरवाजे की ओर जाते हुए) जैसी आज्ञा।

यवनिका

उत्तरार्द्ध

मुख्य पात्र—

महराज	::	::	::	एक रसोइया
सेठानी	::	::		एक व्यापारी की पत्नी
समय	::	::	::	आधुनिक

स्थान—एक हिन्दू-रसोईघर

समय—प्रातःकाल

[दृश्य वैसा ही है जैसा कि पूर्वार्द्ध में था। महराज चबूतरे को गोबर से लीप रहा है। महराज स्वरूप में पूर्वार्द्ध के महाराज से ठीक उल्टा है। यद्यपि अवस्था इसकी भी चालीस वर्ष के लगभग ही है तथापि यह अत्यन्त काले रंग का, ठिगना और बहुत ही दुबला-पतला मनुष्य है। सिर पर छोटी सी चोटी है और उसके चारों ओर के बाल तथा मूँछे की हजामत बढ़ गयी है। ऊपर का शरीर नंगा है। बाएँ कन्धे पर एक पतला सा जनेऊ है जो अत्यन्त मैला हो गया है। नीचे के शरीर पर एक बहुत ही मैला गमछा है। गमछे के ऊपर कमर में नाभि तक दाद के चिट्टे दिख पड़ते है। वह अपने आप कुछ कहता जाता है और कहते-कहते कभी नाक सुड़कता और कभी दाद खुजाता है।]

महराज

ब्राह्मन सब से ऊँची जात है न। (ज़ोर से नाक सुड़ककर) बिरह्मा के मूँडा सूँ हुई है। (लीपना बन्द कर ज़ोर से दाद खुजाते हुए) भू-सुर! महराज! (फिर लीपते हुए) जनम रे पीछे ब्राम्हन रे बाम्हन रहबाने, बाम्हन का करम करबाने, सुद्ध भोजन पाईजे, सुद्ध सूँ सुद्ध भोजन। (नाक पहने हुए गमछे में छिनकते हुए)

निरामिस सामगरी और बिना कोई भी जात री छुई छाई। (कुछ रुककर) हहह ! हहह ! हहह ! हहह ! हहह !

[दाहनी ओर की दीवाल का दरवाज़ा खोलकर सेठानी का प्रवेश। सेठानी की उम्र महराज के बराबर ही है। उसका रंग उतना ही गोरा है जितना महराज का काला। जितना महराज ठिंगना है उतनी ही वह ऊँची और जितना महराज दुबला है उतनी ही वह मोटी। पूर्वार्द्ध का राजा जैसा घेरदार जामा पहने था वैसा ही यह लँहगा पहने है। लँहगे के ऊपर सिर से ओढ़न ओढ़े है। राजा के सदृश सेठानी भी आभूषणों से सुसज्जित है। सिर पर बोर है, कानों में कर्णफूल, गले में तिमनियाँ, भुजाओं पर बाजू, हाथों में गोखरू तथा मोटी-मोटी लाख की चूड़ियाँ और उँगलियों में अँगूठियाँ तथा अँगूठों में आरसियाँ। पैरों में चाँदी की मोटी कड़ियाँ, नेवरियाँ इत्यादि हैं।]

सेठानी

(चौंतरे के निकट आते-आते ज़ोर से) देखो, महराज ! आज सूँ परसोतम मांस लागे हैं। आज मूँ बिरम-जल री रसोई होगी, बिरम-जल री।

महराज

(ज़ोर से नाक सुड़ककर) पानी भी महराज ही ने भरनो पड़सी ?

सेठानी

हाँ, पानी भी थाने ही भरनो है, महराज, और परसोतम मांस सारा घर का, मुनीम-गुमास्ता, नौकर, चाकर, सब का सब, कर रह्या है। सब बिरम-जल री रसोई जीमसी, बिरम-जल री।

महराज

(दाद खुजाते हुए) महराज ने, भू-सुर ने छत्री। बैस ही नहीं सूदररी भी सेवा करनी है ?

सेठानी

(कड़क कर) नही करनी हो तो अपनो हिसाब करलो, महराज। अठे रहस्यो तो काम तो करनो ही पड़सी। मुफ्त का पीसा थोड़े ही आया है। और थे नई रहस्यो तो थारे सरीसा छप्पन सै साठ आ जासी। न जाने कितरा भटियारा जूत्याँ चिटकाता आया कितरा चला गया।

महराज

क्यूँ नही, सेठानी जी ? बाम्हन, कहाँरा भू-सुर, कहाँरा महराज ? आज तो बाम्हन-जात भटियाराँरी रसोईराँरी जात रह गई है, बाम्हन और के काम करवा लायक रह्या है ? न जाने म्हाँ का कौन-सा पुरखा ने या छुआ छूत......या भूतनी......या डाकनी ने......**(एक हाथ से ज़ोर से दाद खुजाता है और दूसरे से गमछे में नाक छिनकता है)**

सेठानी

(घृणा से) थे कित्ता गन्दा रहो हो, महराज, कित्ता गन्दा।

महराज

गन्दा ! गन्दा, सेठानी जी ? हहह ! हहह ! हहह ! हहह ! हहह ! महराज ! महराज !! महराज !!!

[महराज एक विडंबना-युक्त दृष्टि से चूल्हे की ओर देखता है। सेठानी धीरे धीरे बाईं तरफ़ की दीवाल के दरवाज़े की ओर बढ़ती है।]

यवनिका

समाप्त

सच्चा धर्म

(एक ऐतिहासिक एकांकी)

मुख्य पात्र—

पुरुषोत्तम :: दिल्ली निवासी एक महाराष्ट्र ब्राह्मण

अहिल्या :: :: :: पुरुषोत्तम की पत्नी

संभाजी :: :: :: शिवाजी का पुत्र

दिलावर खां :: औरंगजेब की खुफ़िया जमात का एक सर्दार

रहमान बेग :: :: दिलावर खां का मातहत

पहला दृश्य

स्थान—दिल्ली में पुरुषोत्तम के मकान का एक कमरा

समय—मध्याह्न के निकट

[कमरा एक छोटे से मकान के एक छोटे से कमरे सदृश दिखायी देता है दीवालें स्वच्छता से पुती हुई हैं। दीवालों में जो दरवाज़े खिड़कियाँ हैं उनसे बाहर की एक तंग गली के कुछ मकान दिखायी पड़ते हैं। एक दरवाज़े से नीचे उतरने के लिये जीने की कुछ सीढ़ियाँ दिखायी देती हैं। कमरे की छत में काँच की कुछ हंडियाँ लटक रही हैं। कमरे की ज़मीन पर आधे में बिछायत है और आधी खाली। कमरे में पुरुषोत्तम बेचैनी से इधर-उधर टहल रहा है। पुरुषोत्तम की अवस्था लगभग साठ वर्ष की है। वह गेहुँएँ रंग और साधारण शरीर का मनुष्य है। सिर के बाल मराठी ढंग के हैं, अर्थात् पीछे चौड़ी शिखा है, उसके चारों ओर छोटे-छोटे बाल और उसके चारों तरफ़ के बाल मुड़े हुए। मुख पर बड़ी-बड़ी मूछें हैं। सारे बाल तीन चौथाई से अधिक सफ़ेद हैं। वह लाल रंग का रेशमी उपरना ओढ़े हुए हैं उसी रंग का रेशमी सोला पहने है। उस के सिर पर श्वेत चंदन का त्रिपुण्ड लगा हुआ है और वक्षस्थल पर मोटा यज्ञोपवीत दिखायी देता है। अहिल्या का प्रवेश। अहिल्या करीब ४५ वर्ष की अवस्था की गेहुँएँ रंग और स्थूल शरीर की स्त्री है। बाल बहुत से सफ़ेद हो गये हैं। वह मराठी ढंग की लाल

चार खाने की साड़ी और वैसी ही चोली पहने हुए है। कुछ सोने के आभूषण भी पहने है।]

अहिल्या

अभी भी.. अभी भी वही हाल है, कोई निर्णय नहीं हो सका?

पुरुषोत्तम

(खड़े होकर) अहिल्या, प्रश्न कोई साधारण प्रश्न है।

अहिल्या

(बैठकर) कम से कम तुम सदृश सत्यवादी व्यक्ति के लिए तो ऐसे प्रश्नों में असाधारणता नहीं होनी चाहिए। जन्मभर तुम्हारा सत्य-व्रत अटल रहा। तुम सदा कहते रहे हो कि जीवन में यदि मनुष्य एक सत्य का आश्रय लिये रहे तो वह सत्य स्वयं ही सारे प्रश्नो का निराकरण कर देता है, पर जब मनुष्य सत्य का आश्रय छोड़ मिथ्या का आसरा लेता है, तभी तरह-तरह के प्रश्न उठ खड़े होते हैं।

पुरुषोत्तम

(बैठकर आश्चर्य से) सत्य का आश्रय छोड़ मिथ्या का आसरा? मैं सत्य का आश्रय छोड़ मिथ्या का आसरा ले रहा हूँ?

अहिल्या

और क्या कर रहे हो? संभाजी को शिवाजी तुम्हारे पास रख गये हैं, यह क्या सच नहीं है? जो लड़का तुम्हारे पास रहता है वह तुम्हारा भानजा है, यह कहना सच बोलना है?

पुरुषोत्तम

संभाजी को संभाजी न कहकर अपना भानजा कहना, शिवाजी मेरे पास संभाजी को नहीं रख गये हैं, यह कहना,

साधारण सच बोलने से कहीं बड़ा सत्य है।

अहिल्या

तुम्हारी सत्य-प्रियता अधिकांश दिल्ली में प्रसिद्ध है, इसी के कारण यवन तक तुम्हारा आदर करते हैं। हमारे विवाह को चालीस वर्ष हो चुके परन्तु आज तक मैंने तुम्हारे मुख से कोई मिथ्या वाक्य क्या, मिथ्या शब्द, और मिथ्या शब्द ही नहीं, मिथ्या अक्षर तक न सुना, वहाँ तुम आज बड़ी से बड़ी मिथ्या बात कह कर उसे साधारण सत्य भाषण से बड़ा सत्य कह रहे हो?

पुरुषोत्तम

अहिल्या, हमारे शास्त्रों में सत्य और असत्य की व्याख्या बड़ी बारीकी से की गयी है। अनेक बार सत्य के स्थान पर मिथ्या भाषण सत्य से भी बड़ी वस्तु होता है। जीवन में धर्म से बड़ी कोई चीज़ नहीं, धर्म की रक्षा यदि असत्य से होती है तो असत्य सत्य से बड़ा हो जाता है।

अहिल्या

धर्म की रक्षा! अब तो तुमने और बड़ी बात कह दी। संभाजी को अपना भानजा बनाने से तुम धर्म की रक्षा कर सकोगे? दिलावर खाँ कह गया है कि वह उसे तुम्हारा भानजा तब मानेगा, जब तुम उसके साथ बैठकर एक थाली में भोजन करोगे। ब्राह्मण होकर अब्राह्मण के साथ भोजन करने से धर्म-रक्षा हो सकेगी?

पुरुषोत्तम

(उठकर फिर टहलते हुए) अहिल्या, यही......यही प्रश्न मुझे व्यथित किये हुए है। जीवन भर मैंने जिस प्रकार धर्म का पालन किया है, उसे तुमसे अधिक और कोई नहीं जानता......नहीं

......नहीं......भगवान् तुमसे भी अधिक जानते हैं। **(फिर बैठकर)** मैंने त्रिकाल-संध्या, तर्पण, हवन इत्यादि सारे ब्राह्मण-कर्म नियमपूर्वक किये हैं; शौच-अशौच का सदा पूर्ण विवेक रखा है ; भक्ष्याभक्ष्य की ओर अधिक से अधिक ध्यान दिया है; ब्राह्मण को छोड़कर किसी के हाथ का छुआ जल तक ग्रहण नहीं किया, वही......वही मैं इस चौथेपन में अब्राह्मण के साथ बैठकर, एक ही थाली में, कैसे खाऊँगा, यह प्रश्न मुझे व्यथित ......अत्यधिक व्यथित किये हुए है। **(फिर टहलते हुए)** भगवान् इस चौथेपन मे क्या मेरी परीक्षा लेना चाहते हैं ? एक अब्राह्मण के साथ भोजन करा मुझे भ्रष्ट करना चाहते हैं ?

अहिल्या

यदि तुमने अब्राह्मण के साथ भोजन किया तो तुम्हीं...... तुम्हीं भ्रष्ट न होगे सारा कुटुम्ब भ्रष्ट हो जायगा। दो-दो कन्याएँ विवाह योग्य हो गयी हैं, किसी ब्राह्मण-कुटुम्ब में उनका विवाह न हो सकेगा। पुत्र का विवाह हो चुका है, तो क्या हुआ उसकी संतान तक भ्रष्ट हो जायगी, उसका न यज्ञोपवीत होगा और न ब्राह्मणों में विवाह-संस्कार।

पुरुषोत्तम

(अहिल्या के निकट बैठकर, उसकी ओर देखते हुए) तब...... तब क्या करूँ ?

अहिल्या

मैंने तो कहा जन्म भर जिसके आश्रय में रहे हो, उस सत्य को न छोड़ो। औरंगज़ेब के सदृश बादशाह के राज्य में, उसकी राजधानी में, रहते हुए हिन्दू और ब्राह्मण होते हुए, भी तुम यह सफल-जीवन उसी के सत्य-आश्रय के कारण बिता सके हो, इस

चौथेपन में वह आसरा छोड़ने से बुरी और कोई बात नहीं हो सकती, विशेषकर तब जब उस आसरे का सुफल तुम देख चुके हो, अनुभव कर चुके हो। धर्म की टेढ़ी मेढ़ी व्याख्याओं में पड़ कर अपना जीवन भर का सीधा मार्ग छोड़ अपने और अपने कुटुम्ब को नष्ट मत करो।

पुरुषोत्तम

तो मैं यह कह दूँ कि वह लड़का शिवाजी का पुत्र संभाजी है, मेरा भानजा नहीं। मिठाई की टोकरी में छिपकर दिल्ली से भागते समय शिवाजी उसे मेरे पास छोड़ गये हैं।

अहिल्या

कम से कम तुम्हें सत्य बात के कहने में पशोपेश होना ही न चाहिए।

पुरुषोत्तम

और इसका परिणाम क्या होगा ?

अहिल्या

परिणाम जो कुछ हो तुम सदा कहते नहीं रहे हो कि सत्य बोलने के सम्मुख परिणाम की ओर मनुष्य को दृष्टि ही नहीं डालना चाहिए।

[पुरुषोत्तम सिर नीचा कर विचारमग्न हो जाता है; कुछ देर निस्तब्धता।]

पुरुषोत्तम

(एकाएक सिर उठाकर) नहीं नहीं,......नहीं नहीं......यह कभी नहीं हो सकता, यह कभी नहीं हो सकता। यह.....यह विश्वासघात होगा;...ऐसा......ऐसा पातक, जिससे बड़ा पातक सम्भव ही नहीं। यह......यह शरणागत का बलिदान होगा;

ऐसा......ऐसा दुष्कर्म, जिससे बड़ा दुष्कर्म हो नहीं सकता।

अहिल्या

पर दूसरी ओर तुम सत्य को तिलांजलि दे रहे हो...... अब्राह्मण के साथ भोजन कर धर्म-भ्रष्ट होने का प्रश्न तुम्हारे सम्मुख है और स्वयं के भ्रष्ट होने का ही नहीं, पर सारे कुटुम्ब के नष्ट हो जाने का......

पुरुषोत्तम

(उठकर टहलते हुए) ओह !......ओह !

लघु-यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—दिल्ली की एक गली

समय—मध्याह्न के निकट

[तंग गली के कुछ मकान दिखायी पड़ते है। दिलावरख़ाँ और रहमानबेग खड़े हैं। दोनों अधेड़ अवस्था और गेहुँएँ रँग के ऊँचे-पूरे व्यक्ति हैं। दिलावरख़ां के दाढ़ी भी है। दोनों उस समय की सैनिक वरदी लगाये हुए हैं।]

दिलावरख़ाँ

(विचारते हुए) पंडित पुरुषोत्तमराव झूठ बोलेंगे ऐसा...... ऐसा यक़ीन तो नहीं होता।

रहमानबेग

जनाब, तमाम देहली में कौन ऐसा होगा, जो उन्हें जानता हो और यह मानता हो कि वे कभी भी झूठ बोल सकते हैं।

दिलावरख़ाँ

(उसी प्रकार विचारते हुए) लेकिन, रहमानबेग, वह लड़का दकखनी बिरेहमन दिखलाता नहीं।

रहमानबेग

सिर्फ़ सूरत से यह कह सकना कि कौन बिरेहमन है और कौन नहीं, यह तो एक बड़ी मुश्किल बात है।

[कुछ देर निस्तब्धता। दिलावरख़ाँ गंभीरता से सोचता रहता

है और रहमानबेग उसकी तरफ़ देखता है।]

रहमानबेग

(कुछ देर बाद) फिर आपने तो पंडित की बात पर ही यकीन करके मामले को नहीं छोड़ दिया, आपने तो उसे बहुत बड़ा सुबूत देने के लिए कहा है। पुरुषोत्तमराव की बात ही काफ़ी है, फिर अगर वह उस लड़के के साथ बैठकर खाना खा लेता है, तब तो शक की गुंजाइश ही नहीं रह जाती।

दिलावरख़ाँ

(सिर उठाकर) हाँ, कोई बिरेहमन किसी नीची क़ौम के साथ बैठकर थोड़े ही खा सकता है।

रहमानबेग

और दक्खनी बिरेहमन मराठा के साथ, चाहे जान निकल जाय तो भी न खायगा।

दिलावरख़ाँ

पुरुषोत्तमराव के मानिंद बिरेहमन तो कभी नहीं।

रहमानबेग

कभी नहीं, कभी नहीं।

दिलावरख़ाँ

(ऊपर की तरफ़ देखकर) तो दोपहर तो हो रहा है। पूजा-पाठ के बाद उसने दोपहर को ही खाने के वक्त बुलाया था।

रहमानबेग

हाँ, वक्त हो रहा है, चलिए, चलिए।

[दोनों का प्रस्थान।]

लघु यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—पुरुषोत्तम के मकान का एक कमरा

समय—मध्याह्न

[दृश्य पहले दृश्य के सदृश ही है। पुरुषोत्तम और अहिल्या बैठे हुए हैं। अहिल्या का मुख प्रसन्नता से खिल-सा गया है, परन्तु पुरुषोत्तम के मुख पर वैसी ही उद्विग्नता दृष्टिगोचर होती है। पुरुषोत्तम पृथ्वी की ओर देख रहा है।]

अहिल्या

(ऊपर की ओर देखकर) धन्यवाद......अगणित बार धन्यवाद है, भगवान् को कि अन्त में सत्य की उसने विजय करा दी। (पुरुषोत्तम की ओर देख) दिन भर का भूला भटका यदि रात को भी घर लौट आवे तो वह भूला नहीं कहलाता। उद्वेग के कारण तुमने एक बार मिथ्या अवश्य बोल दिया, पर देर.........बहुत देर नहीं हुई, अभी भी समय था। दिलावरख़ाँ के आने के पहले तक समय था। अब उससे सारी बातें सचसच कह देने पर मिथ्या-भाषण के पाप से तुम मुक्त हो जाओगे। जन्म भर जिस सत्य का आश्रय रखा है, उसी की शरण में रहने से कोई आपत्ति भी नहीं आयगी।

[पुरुषोत्तम कोई उत्तर नहीं देता। अहिल्या उसकी ओर देखती रहती है। कुछ देर निस्तब्धता]

अहिल्या

(कुछ देर बाद, पुरुषोत्तम की ओर देखते हुए) देखा......
देखा नहीं, एक.........केवल एक बार सत्य का आसरा छोड़ते ही कैसी......कैसी महान् आपत्ति आयी। एक मिथ्या को सत्य सिद्ध करने के प्रयत्न में कितनी मिथ्या बातें कहनी पड़ती हैं। तुम सदृश सत्यवादी से अपने कथन की पुष्टि के लिए प्रमाण माँगा गया, ऐसा वैसा प्रमाण नहीं, भयंकर प्रमाण, महा भयंकर प्रमाण! तुम्हारा मराठा के साथ, एक अब्राह्मण के साथ, एक थाल में भोजन! ओह। यह.........यह कभी संभव था?

[पुरुषोत्तम फिर कुछ नहीं बोलता। पर दृष्टि उठा अहिल्या की ओर देखने लगता है। अहिल्या चुपचाप उसकी ओर देखती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

अहिल्या

(कुछ देर बाद) जन्म भर का सारा पूजन-अर्चन समाप्त हो जाता। जीवन भर के सारे नियम-व्रत भंग हो जाते। न जाने कितने जन्मों के पुण्यों के कारण ब्राह्मण कुल में जन्म लिया था और ऐसे शुद्धब्राह्मण कुल में। फिर इस जन्म में भी ब्राह्मण-धर्म का कैसा पालन किया था। कभी संध्या न छोड़ी, कभी तर्पण न त्यागा, कभी हवन न छोड़ा, किसी का छुआ जल तक पान न किया था। सब.........सब चला जाता। स्वयं.........स्वयं ही भ्रष्ट न होते, परन्तु......परन्तु सारा कुल भ्रष्ट हो जाता, लड़कियाँ कुँवारी रह जातीं। लड़के की संतति अब्राह्मण हो जाती। **(कुछ रुककर)** होता......होता कैसे ऐसा! जन्म भर का सत्-कर्म पल भर में नष्ट कैसे हो जाता। भगवान् ऐसा कैसे होने देते।

[पुरुषोत्तम फिर कुछ नहीं बोलता, पर चुपचाप उठकर टहलने लगता है। अहिल्या कुछ देर तक बैठे बैठे उसकी तरफ देखती रहती है और फिर उठकर उसीके साथ टहलने लगती है।]

अहिल्या

(टहलते टहलते) और......और फिर यह सब किसी अपने के लिए नहीं, दूसरे......दूसरे के लिए।

[पुरुषोत्तम चुपचाप खड़े होकर अहिल्या की ओर देखने लगता है। अहिल्या भी खड़ी हो जाती है।]

अहिल्या

हाँ, क्या......क्या प्रयोजन है हमें शिवाजी से और उसके इस पुत्र संभाजी से? दूसरे के लिये हम क्यो अपना इह लोक और पर लोक बिगाड़े स्वयं नष्ट हों और अपने कुल को नष्ट करे? **(कुछ रुककर)** सोचो,......जरा सोचो तो कहीं औरंगज़ेब को पता लग जाय कि तुमने शिवाजी के पुत्र को आश्रय दिया और......और उसे बचाने के लिए झूठ बोले......और...... और उस झूठ को सत्य सिद्ध करने के लिए अपने धर्म-कर्म की भी परवाह न कर उसके साथ एक थाल में भोजन तक किया,...... तो......तो औरंगज़ेब के सदृश बादशाह क्या करे तुम्हारा और हमारे सारे कुटुम्ब का?

[पुरुषोत्तम फिर भी कुछ न कह टहलने लगता है। अहिल्या भी उसके साथ टहलती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

अहिल्या

(कुछ देर बाद) ठीक.........ठीक समय भगवान ने तुम्हें सुबुद्धि दी। सारा हाल सच सच कह देने से अच्छा निर्णय हो ही नहीं सकता था। परलोक बचा, क्योंकि मराठा के साथ खाने

से जो धर्म जाता वह धर्म बच गया। इह लोक बचा, क्योंकि राज्य-भय नहीं रह जायगा। इतना......इतना ही नहीं, संभाजी को पाते ही,......तुम्हारे ज़रिये पाते ही औरंगज़ेब कितना ......कितना खुश होगा तुम पर !......कदाचित्......कदाचित् तुम मनसबदार हो जाओ;......तुम न भी हुए......अर्थात् तुमने यदि मनसबदारी अस्वीकृत भी कर दी, तो......तो मनसबदार हो सकता है हमारा लड़का।......अरे ! उन लड़कियों का संबन्ध तक अच्छे से अच्छे स्थान पर हो सकेगा।......कितना ......कितना परिश्रम तुम कर चुके हो इन लड़कियों के लिये योग्य वर ढूँढ़ने का। बादशाह......हाँ; बादशाह की कृपा के पश्चात् कौन..... कौन वस्तु दुर्लभ रह जायगी ? **(कुछ रुककर)** और......और यह सब होगा किस कारण......उसी......उसी सत्य की शरण के कारण, जिसका जीवन......हाँ, जीवन भर तुमने आश्रय रखा है।

[नेपथ्य में 'पंडित जी ! पंडित जी !' शब्द होता है]

अहिल्या

(जल्दी से) लो, लो, कदाचित् दिलावरखाँ आ गया। अब ....अब सब बातचीत स्पष्ट रूप में कर लो उससे . ... **(शीघ्रता से प्रस्थान।)**

पुरुषोत्तम

(जिसके मुख का रंग ही दिलावरख़ाँ की आवाज़ सुन और ही हो गया है, गला साफ़ करते हुए, खिड़की के पास जा, मुख बाहर निकाल, नीचे देखते हुए) आहाहा ! दिलावरखां साहब ! आइए, आ जाइए ।

[दिलावरख़ाँ और रहमानबेग का प्रवेश।]

पुरुषोत्तम

आइए, आइए, मैं पूजा से उठ आपही लोगों का रास्ता देख रहा था। बैठिए, बैठिए।

दिलावरख़ाँ

(बिछायत पर बैठते हुए) आप भी तो बैठिए, पंडित जी।

[दिलावरख़ाँ और रहमानबेग बिछायत पर बैठ जाते हैं।]

पुरुषोत्तम

पूजा के पश्चात् भोजन तक मैं किसी वस्त्र आदि का स्पर्श नहीं करता। पहले आपको झंझट से मुक्त कर दूँ।

दिलावरख़ाँ

(कुछ सहमते हुए) आपके मुआफ़िक मुआज्जिज शख़्स के लिए जो सुबूत मैंने माँगा उसकी कोई ज़रूरत तो नहीं है, आपकी बात ही सुबूत होनी चाहिए, लेकिन......लेकिन आप जानते हैं कि ये सारे सियासी मामलात......

पुरुषोत्तम

नहीं, नहीं आप कोई संकोच न कीजिए। अपने कर्तव्य का पालन करना आपका धर्म ही है। मैं......मैं भी आपको पूर्ण रूप से सन्तुष्ट कर दूँगा। **(जिस दरवाजे से अहिल्या गयी है उसी से जाता है।)**

रहमानबेग

जनाब, अब भी शक की कोई गुंजाइश बाक़ी है?

दिलावरख़ाँ

वह खाय तो उस लौंडे के साथ पहले मेरे सामने।

रहमानबेग

पर खाने के बाद?

दिलावरख़ाँ

हाँ, खाने के बाद तो शक की कोई गुंजाइश नहीं रहनी चाहिए।

[दिलावरख़ाँ और रहमानबेग उत्कंठा से जिस दरवाज़े से पुरुषोत्तम गया है उस दरवाज़े की ओर देखते हैं। पुरुषोत्तम का एक हाथ में परसी हुई थाली और दूसरे हाथ में जल का कलश लिये हुए प्रवेश। थाली में भात, दाल, शाक इत्यादि परसे हुए हैं। पुरुषोत्तम की सारी उद्विग्नता नष्ट हो, उसका मुख प्रसन्नता से चमक रहा है। उसके पीछे-पीछे संभाजी आता है। पुरुषोत्तम बिना बिछायत की भूमि पर थाली रखता है, उसीके निकट जल का कलश। थाली के दोनों ओर पुरुषोत्तम और संभाजी बैठ जाते हैं। पुरुषोत्तम भोजन का थोड़ा-थोड़ा अंश निकाल ज़मीन पर रख, थाली के चारों ओर जल छिड़कता है।]

पुरुषोत्तम

(जल छिड़कते हुए) 'सत्यन्त्वरितेन परिशिञ्चामि' (अब आचमन करते हुए) 'अमृतो वस्तरण मसि'

[अब पुरुषोत्तम और संभाजी दोनों उसी थाली में से खाना आरंभ करते हैं।]

पुरुषोत्तम

(खाते खाते) कहिए, खाँ साहब, अब .....अब भी आपको विश्वास हुआ या नहीं कि विनायक मेरा भानजा है?

[दिलावरख़ाँ का मुख शर्म से झुक जाता है। रहमानबेग कभी दिलावरख़ाँ की तरफ देखता है और कभी पुरुषोत्तम की ओर]

यवनिका

समाप्त

बाजीराव की तस्वीर

(एक ऐतिहासिक एकांकी)

मुख्य पात्र :—

निज़ामुल मुल्क	::	प्रसिद्ध प्रथम निज़ाम
मुसव्विर	::	निज़ामुल मुल्क का चित्रकार
साथी	::	मुसव्विर का एक साथी
स्थान	::	:: दक्षिण भारत

पहला दृश्य

स्थान—एक जंगली मार्ग

समय—उषःकाल

[बीहड़-सा जंगली मार्ग है। पूर्वाकाश में प्रकाश फैल गया है। निज़ामुलमुल्क और मुसव्विर खड़े हुए हैं। निज़ामुलमुल्क गेहुँएँ रंग का, ऊँचा-पूरा, मोटा ताज़ा, अधेड़ अवस्था का मनुष्य है। वेष-भूषा उस समय की मुग़ल वेष-भूषा के सदृश है—वैसी ही पाग, अँगरखा, पाजामा, कँलगी, सिरपेज तथा अन्य आभूषण आदि। मुसव्विर युवक है। स्वरूप से सच्चा कलाकार जान पड़ता है। उसकी वेष-भूषा निज़ामुलमुल्क से मिलती जुलती है।]

निज़ामुलमुल्क

दिन निकल रहा है, मुसव्विर, अब जल्दी......जल्दी ही तुम्हें जाना चाहिए।

मुसव्विर

आफ़ताब के निकलते ही चला, जहाँपनाह।

निज़ामुलमुल्क

बाजीराव की तस्वीर देखने की मेरी बेचैनी बढ़ती जाती है, मुसव्विर।

मुसव्विर

ऐसे शख़्स की तस्वीर देखने की ख़्वाहिश वाजिब ही है, जहाँ-पनाह।

निज़ामुलमुल्क

मैं देखना चाहता हूँ मुसव्विर, कि आख़िर यह आफ़त का परकाला बिरहमन है कैसा।

मुसव्विर

आप बहुत जल्द उसकी तस्वीर देख सकेंगे, जहाँपनाह।

निज़ामुलमुल्क

और देखो, पहले-पहल जिस जगह, जिस हालत में बाजीराव तुम्हें दिखे, उसी जगह, उसी हालत की तस्वीर बनाना।

मुसव्विर

हुक्म की तामीली होगी, जहाँपनाह।

निज़ामुलमुल्क

एक बात का और ख़याल रखना।

मुसव्विर

किस बात का, जहाँपनाह?

निज़ामुलमुल्क

वह तुम्हें न देख पावे।

मुसव्विर

(मुस्कराकर) क्यों, क्या हुज़ूर का यह ख़याल है कि वह मुझे क़ैद कर लेगा, या मार डालेगा?

निज़ामुलमुल्क

इन मराठों का कोई ठिकाना है? अफ़ज़ल शिवाजी से मिलने ही गया था न?

मुसव्विर

लेकिन, जहाँपनाह, वह सिपहसालार था, मैं मुसव्विर हूँ। सुना तो यह है कि बाजीराव ऐसे लोगों की बड़ी क़द्र करता है।

निज़ामुलमुल्क

पर तुम मेरे मुसव्विर हो, दुश्मन के मुसव्विर।

मुसव्विर

मुसव्विर और शायर दरअसल तमाम दुनिया के होते हैं, जहाँपनाह, और अगर ऐसा नहीं होता तो होना ऐसा ही चाहिए।

[कुछ देर निस्तब्धता। वृक्षों के ऊपरी भागों पर सूर्य की किरणें पड़ती हैं।]

निज़ामुल्मुल्क

(सूर्य की किरणों को देख) लो आफ़ताब निकल आया।

मुसव्विर

मैं चला, जहाँपनाह।

लघु-यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—एक पहाड़ी टीला

समय—प्रातःकाल

[टीले पर वृक्षों की बहुतायत के कारण टीले पर खड़े रहने वालों को दूर के मनुष्य नहीं देख सकते। मुसव्विर अपने एक साथी के साथ टीले पर खड़ा हुआ दूर पर की कोई चीज़ देख रहा है। उसका साथी उसी की अवस्था का है तथा उसी के सदृश उसकी वेष-भूषा भी है। मुसव्विर के निकट ही एक बड़ा-सा चित्र-पट रखा है और प्यालियों में अनेक रंग। मुसव्विर के हाथ में तस्वीर बनाने की क़लम है।]

मुसव्विर

वह...वह...जो घोड़े को चरा रहा है, वह बाजीराव है?

साथी

जी हाँ, वही बाजीराव है।

मुसव्विर

घोड़े को चराने वाला बाजीराव! तुमने उसे पहले कभी देखा भी है?

साथी

न जाने कितनी दफ़ा, जनाब, और कई दफ़ा इसी तरह घोड़े को चराते हुए।

मुसव्विर

लेकिन बाजीराव और दूसरे सिपाहियों में कोई फ़र्क़ ही नहीं; जिस तरह दूसरे सिपाही अपने अपने घोड़ों को चरा रहे हैं उसी तरह बाजीराव भी। जिस तरह वे एक दूसरे से बात कर रहे हैं, उसी तरह बाजीराव उनसे।

साथी

लेकिन आप एक बात नहीं देखते ?

मुसव्विर

क्या ?

साथी

बाजीराव जिस तरह सिपाहियों से बात करता है, उस तरह सिपाही उससे नहीं। सिपाहियों में कितना अदब है।

मुसव्विर

(ध्यान पूर्वक सामने देखने और कुछ देर चुप रहने के बाद) हाँ, यह......यह बात तो ज़रूर है। **(चित्र पर क़लम चलाना आरंभ करता है। बार-बार सामने देखता और बार-बार क़लम चलाता है।)**

[साथी चित्र की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

मुसव्विर

(कुछ देर पश्चात् सामने देखते हुए) तो......तो......दोस्त, मुसव्विर और शायर को जिस तरह अपने और दुनिया में कोई फ़र्क़ न समझ सब को एक नज़र से देखना चाहिए, उसी......उसी तरह सच्चे सिपहसालार को भी ?

साथी

हाँ, लेकिन दुश्मन और दुश्मन की फ़ौज को तो वह उसी

नज़र से नहीं देख सकता।

मुसव्विर

(क़लम चलाते हुए) लेकिन......लेकिन अपनी फ़ौज......अपने सिपाहियों और अपने में तो कोई फ़र्क़ नहीं समझना चाहिए न?

[साथी कोई उत्तर नहीं देता। तस्वीर बनती जाती है।]

लघु-यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—निज़ामुलमुल्क का डेरा

समय—मध्याह्न

[खूब सजे हुए डेरे, का एक भाग दिखायी देता है। निज़ामुलमुल्क, मुसव्विर का साथी और निज़ामुलमुल्क के अनेक मुसाहब खड़े हुए हैं। सब की वेष-भूषा एक दूसरे से बहुत मिलती है। सभी बाजीराव की तस्वीर देख रहे हैं। तस्वीर वही है जो टीले पर बन रही थी अब वह पूरी हो गयी है। तस्वीर एक ऊँचे स्टैण्ड पर रखी हुई है। बाजीराव एक भाले को कन्धे पर रखे साधारण से साधारण सैनिक के सदृश अपने घोड़े को चरा रहा है। उसके आस-पास कई सैनिक खड़े हुए हैं। ये सब भी अपने-अपने घोड़ों को चरा रहे हैं। सबकी बाजीराव के प्रति एक विशेष प्रकार की श्रद्धा दिखाई पड़ती है। वेष-भूषा सब की एक-सी है—उस समय के मराठा सैनिकों के सदृश। एक सैनिक से बाजीराव बातें कर रहा है। बाजीराव उससे इस प्रकार बात कर रहा है, मानो वह बराबरी का व्यक्ति है, पर सैनिक अत्यधिक अदब से झुका-सा है।]

निज़ामुलमुल्क

(चित्र को देखते-देखते) आज मुझे बाजीराव की कामयाबी का सच्चा सबब मालूम हुआ। जो सिपहसालार लड़ाई में सिपाहियों की सिपहसालारी करता है, वही .....वही जब लड़ाई नहीं

होती तब सिपाहियों के साथ उनका दोस्त बन उनके साथ अपना घोड़ा चराता और उनसे दोस्त के मानिन्द बातें करता है। (**कुछ रुककर**) दुश्मन हुआ तो क्या हुआ ? लेकिन वाह !..... वाह ! बाजीराव ! (**कुछ रुककर**) और ऐसे......ऐसे दुश्मन से जंग हो या सुलह, यह......यह भी मुझे सोचना......सोचना......

यवनिका

समाप्त

सच्ची पूजा

(एक ऐतिहासिक एकांकी)

मुख्य पात्र—

माधवराव	::	::	::	पेशवा
रामशास्त्री	::	::		न्यायाधीश
हरिभाऊ	::	::		माधवराव का नौकर

स्थान—पूना में पेशवा के महल की दालान

समय—मध्याह्न

[दालान के पीछे की दीवाल पर रंग और चित्रकारी है। चित्रकारी में मराठा इतिहास के कुछ दृश्य अंकित हैं। दोनों ओर तथा सामने खंभे हैं; वे भी रंगीन। दालान की छत से काँच के झाड़ और हंडियाँ लटक रहे हैं, और पृथ्वी पर बिछावन है। बिछावन पर यत्र-तत्र गद्दियाँ बिछी हुई हैं; जिनपर मसनद लगे हैं। बीच की गद्दी के नीचे, बिछावन पर, हरिभाऊ बैठा हुआ है। वह अधेड़ अवस्था का साँवले रंग तथा साधारण शरीर का व्यक्ति है। सिर के बाल मराठी ढंग से कटे और झड़े हैं, अर्थात् पीछे की ओर चौड़ी शिखा है, शिखा के चारों ओर कुछ दूर तक छोटे-छोटे बाल हैं और उन बालों के बाद के बाल अस्तुरे से मूँड़े हुए। उसके मुख पर उसकी बड़ी-बड़ी मूँछें एक विशेष स्थान रखती हैं। वह चौड़ी किनार की धोती पहने है तथा दुपट्टा ओढ़े है। वह संत तुकाराम का एक अभंग गा रहा है।]

[रामशास्त्री का प्रवेश। रामशास्त्री अधेड़ अवस्था का गेहुँएँ रंग और साधारण शरीर का व्यक्ति है। उसके बाल भी हरिभाऊ के सदृश ही हैं, पर मूँछें मुँड़ी हुईं। वह मराठी ढंग का अँगरखा और चौड़ी किनार की धोती पहने है। गले में दुपट्टा डाले है और सिर पर लाल रंग की रेशमी मराठी पगड़ी लगाये है।

रामशास्त्री को देखकर हरिभाऊ जल्दी से खड़े हो झुककर प्रणाम करता है।]

रामशास्त्री

कहो, हरिभाऊ, श्रीमन्त अभी भी पूजा में ही हैं?

हरिभाऊ

(हाथ जोड़कर) हाँ, महाराज, परन्तु अब पूजा से उठने का समय हो रहा है।

रामशास्त्री

क्यो नहीं, अभी भी न उठेंगे तो कब उठेंगे ? मध्याह्न बीत रहा है। (कुछ रुककर) मैं देखता हूं, यह पूजा बढ़ती ही जा रही है, हरिभाऊ। पहले उषःकाल से आरंभ हो प्रभात होते-होते समाप्त हो जाती थी; धीरे-धीरे मध्याह्न तक पहुँची है; कदाचित् अपराह्न तक पहुँचते अब बहुत बिलंब न लगेगा; और उसके पश्चात् संभव है, सन्ध्या और रात्रि तक भी पहुँच जाय।

हरिभाऊ

इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है, शास्त्रीजी।

रामशास्त्री

ऐसा ? ठीक। मैं देखता हूँ, यहाँ का सारा वायुमंडल ही पूजा-मय हो रहा है; तुम अभी । ंत तुकाराम का एक अभंग गा ही रहे थे।

हरिभाऊ

यह सब श्रीमन्त के कारण है, महाराज, इस सारे वायुमंडल का पुण्य उन्हीं को है।

[दो मज़दूरों का सिर पर बड़ा-बड़ा एक-एक टोकना लिए हुए प्रवेश।]

रामशास्त्री

(मज़दूरों से) हाँ, यहीं रख दो, इन टोकनों को।

[मज़दूरों का टोकना रखकर प्रस्थान।]

रामशास्त्री

हरिभाऊ, इन टोकनों का सारा सामान निकालकर दो गद्दियों पर तो जमा दो।

[हरिभाऊ टोकनों को खाली करना आरंभ करता है। दोनों टोकनों में से एक-सा सामान निकलता है—एक-एक लंबे गेरुए रंग का झोला, एक-एक गेरुए रंग की धोती, एक-एक मृगछाला, एक-एक कमण्डल, एक-एक चंदन पीसने का होरसा और मुठिया और एक-एक रुद्राक्ष की माला।]

हरिभाऊ

ये सब वस्तुएँ, शास्त्रीजी......

रामशास्त्री

ये वस्तुएँ श्रीमन्त और मेरे काशी-प्रस्थान के लिए हैं।

हरिभाऊ

(आश्चर्य से) काशी-प्रस्थान के लिये!

रामशास्त्री

हाँ, हरिभाऊ जो पुण्य श्रीमन्त कमाना चाहते हैं वह काशी में ही कमाया जा सकता है; यहाँ नहीं, और तुम भी संत तुकाराम के अभंग गा-गाकर यदि इस प्रकार का पुण्य कमाना चाहते हो तो तुम भी इसी प्रकार की तैयारी कर काशी-प्रस्थान के लिए प्रस्तुत हो।

[माधवराव का प्रवेश। वह युवावस्था का, गौर वर्ण का, दुबला-पतला, परन्तु परम सुन्दर पुरुष है। सिर पर त्रिपुण्ड लगाये

है। शरीर पर लाल रेशमी उपरना और वैसा ही सोला धारण किये है। रामशास्त्री को देखकर वह झुककर प्रणाम करता है।]

रामशास्त्री

(दोनों हाथ उठाकर) आयुष्मान, श्रीमन्त।

माधवराव

आपको पधारे क्या बहुत विलंब हुआ, महाराज? (टोकनों के सामान पर दृष्टि पड़ जाने पर) हैं! यह सब क्या है?

रामशास्त्री

आपके और मेरे काशी-प्रस्थान की तैयारी, श्रीमन्त।

माधवराव

(आश्चर्य से) काशी प्रस्थान की तैयारी! (कुछ रुककर) मैं समझा नहीं, शास्त्रीजी।

रामशास्त्री

आप समझे नहीं, श्रीमन्त, पूजा के मध्याह्न तक आ जाने पर भी जब आप नहीं समझे तब क्या उसके अपराह्न, अथवा सन्ध्या, अथवा रात्रि तक पहुँचने पर समझेंगे? श्रीमन्त, जो आप इस समय कर रहे हैं वह सच्ची पूजा नहीं है, मैं चाहता हूँ कि यदि यही पूजा आपको करनी है तो वह सच्ची पूजा हो जाय।

माधवराव

(कुछ देर चुप रहने के बाद) तो क्या सच्ची पूजा काशी में ही हो सकती है और इस वेष को धारण कर?

रामशास्त्री

हाँ, आपके और मेरे लिए तो यही बात है।

माधवराव

मैं फिर नहीं समझा, महाराज।

रामशास्त्री

देखिए, श्रीमन्त, आप इस समय राज-पाठ चलाने की दीक्षा में हैं। मुझे भी आपने वही काम सौंप रखा है। भगवान् का स्मरण कर भगवत् नाम ले, अपनी प्रजा को भगवान् का ही स्वरूप मान, अपने कार्य को भगवत्-कार्य समझ, इस प्रकार की पूजा तो हम पूना में कर सकते हैं, यहाँ तो हमारी सच्ची पूजा वह हो सकती है, परन्तु यदि आपको उषःकाल में उठकर मध्याह्न तक जप-यज्ञादि करना है, तो उस कार्य में भी मैं आपका साथ देने को तैयार हूँ, परन्तु उसके लिए आपको नयी दीक्षा लेनी होगी, नया वेष बनाना होगा, नया स्थान चुनना होगा। उसीकी तैयारी कर मैं आज सेवा में उपस्थित हुआ हूँ। इन दिनों बहुत समय से मैं आपकी इस समय की दीक्षा के अनेक कार्य लेकर आया, पर सदा आपको जप-यज्ञादि में ही लिप्त देखा। अपनी वर्तमान दीक्षा के कार्य के लिए आपको अवकाश ही नहीं। जिस दीक्षा में इस समय आप हैं उसके लिए जो पूजा आप कर रहे हैं, वह सच्ची पूजा नहीं।

माधवराव

(**कुछ ठहरकर, विचारते हुए, गद्-गद् स्वर से**) रामशास्त्री के बिना कौन मुझे सच्ची पूजा का रहस्य समझा सकता है? कौन मुझे सच्चा कर्तव्य-पथ दिखा सकता है? **(कुछ रुककर)** महाराज, छत्रपति शिवाजी के लिए स्वामी रामदास का जो स्थान था, मेरे लिए वही आपका है। **(फिर कुछ रुककर)** कल से भगवान् का स्मरण कर भगवत् नाम ले, अपनी प्रजा को भगवान् का ही स्वरूप मान, अपने कार्य को भगवत्-कार्य समझ, मैं आपके आदेशानुसार सच्ची पूजा आरंभ करूँगा।

[माधवराव रामशास्त्री के पैर पकड़ लेता है। रामशास्त्री माधवराव को उठाकर हृदय से लगाता है। हरिभाऊ भौंचक्का-सा दोनों की ओर देखता है।]

यवनिका

समाप्त

---

*

*

प्रायश्चित्त

(एक ऐतिहासिक एकांकी)

*

मुख्य पात्र—

रघुनाथराव	::	::	पेशवा का चाचा, पीछे से पेशवा
आनन्दीबाई	::	::	रघुनाथराव की स्त्री
सखाराम बापू	::	::	पेशवा का कारबारी
रामशास्त्री	::	::	न्यायाधीश

उपक्रम

स्थान—पूना में पेशवा के महल का वह कमरा, जिसमें रघुनाथराव कैद है

समय—रात्रि

[कमरे की दीवालें रंगी हुई हैं। पीछे की दीवाल में ऊपर की तरफ़ कुछ खिड़कियाँ हैं, जिनमें लोहे के सिकचे लगे हुए हैं। इन खिड़कियों से बाहर उगे हुए चन्द्रमा की किरणें कमरे में आ रही हैं। बाँई ओर की दीवाल में कोई दरवाज़ा नहीं है। दाहनी ओर की दीवाल में लोहे की चादर का दरवाज़ा है, जो बन्द है। कमरे की छत पर पत्थर का पटाव है और ज़मीन पर भी पत्थर के ही फ़र्श है। पत्थर के फ़र्श पर बिछावन है—गद्दे तकिये आदि। पीतल की दीवट में बत्तियाँ जल रही हैं। कमरे में बहुत ही मुख़्त-सर सामान है—पीने के पानी का मिट्टी का एक घड़ा, पीतल के कटोरे इत्यादि, कुछ पहिनने के कपड़े आदि। एक गद्दी पर रघुनाथ-राव तकिये के सहारे आधा लेटा हुआ है। रघुनाथराव अधेड़ अवस्था का, गेहुँएँ रंग का ऊँचा-पूरा मोटा-ताज़ा आदमी है। बाल मराठी ढंग के हैं। अर्थात् पीछे शिखा, उसके चारों ओर छोटे छोटे बाल और उनके चारों तरफ़ के मुंड़े हुए। बड़ी-बड़ी मूछें हैं। बालों में सफ़ेदी आ चली है। रघुनाथराव चौड़ी किनार की सफ़ेद धोती और छोटा सा मराठी ढंग का कुरता पहने हुए है।

उसका सिर नङ्गा है। उसके पास ही उसकी स्त्री आनन्दीबाई बैठी हुई है। आनन्दीबाई भी अधेड़ अवस्था की, गेहुँएँ रंग की कुछ मोटी स्त्री है। काली चारखाने की चौड़ी किनार की मराठी साड़ी और चोली पहने हुए है। सुवर्ण के कुछ आभूषण भी पहने है। रघुनाथराव के मुख पर उद्विग्नता के भाव झलक रहे हैं और आनन्दीबाई के मुख पर क्रोध, प्रतिकार और षड्यंत्र के मिश्रित भाव।]

आनन्दीबाई

(रघुनाथराव की तरफ़ देखते हुए) हाँ, मैंने..........मैंने "धरावे" शब्द को बदलकर "मारावे" किया है। और क्यों......क्यों न करती मैं इसे ? सहने......सहन करने की कोई सीमा होती है ? इस काल-कोठरी में, चाहे वह महल की ही क्यों न हो, सारे बाह्य जगत से बिलग होकर जन्म भर हम क़ैद में सड़ा करें ? और क्यों......क्यों सड़े ? हमारा अपराध......क्या अपराध है हमारा ? और कौन......कौन है यह दुधमुँहा बच्चा नारायणराव हमें क़ैद में रखनेवाला ? (कुछ रुककर) इसके भाई माधवराव ने भी हमारे साथ यही व्यवहार किया। भगवान, ने उसे इसका बदला दिया। मर गया वह जवानी में ही।

[रघुनाथराव के नेत्रों में आँसू छलछला आते हैं।]

आनन्दीबाई

(रघुनाथराव की आँखों को ध्यान से देखते हुए) अभी......अभी भी माधवराव को याद कर आँसू बहाओगे ?......(कुछ रुककर) तुम-सा भोला मनुष्य तो देखा क्या, सुना तक नहीं। मरते समय जब उसने क़ैद से छोड़, इस नारायण को तुम्हें सौंपा, भूल गये तुम उसकी सारी क्रूरताओं को, लट्टू हो गये फिर उस पर।

भतीजा......भतीजा था न; यह न सोचा कैसा भतीजा था ? **(फिर कुछ रुककर)** और आज......आज भी उसकी याद में आँसू ! **(फिर कुछ रुककर)** मैं कहती हूँ, उसने उस समय तुम्हें क़ैद से छोड़, तुम पर कोई उपकार नहीं किया था। वह तुम्हें न छोड़ता तो करता क्या ? इस नारायणराव की रक्षा तुम्हीं कर सकते थे। तुम्हें यह न सौंपा जाता तो भेड़ के बच्चे......मेमने के सदृश खा जाते इसे चारों तरफ़ रहनेवाले भेड़िये। **(फिर कुछ रुककर)** देखो......देखो तो इसकी कुटिलता ! ज्योंही मतलब निकल गया, अपनी स्थिति सँभाल ली, त्योंही भाई के सदृश उसका भी व्यवहार ! तोते-सी आँख फेरने में देरी न लगी। तुम फिर क़ैद में। **(फिर कुछ रुककर)** मैं कहती हूँ तुम्हें तो ये अपने दिखते हैं; तुम इन्हें भतीजे समझते हो; पर इन्होंने भी तुम्हें कभी काका समझा ? **(फिर कुछ रुककर)** दुनिया में ऐसा भोला......ऐसा सीधा-सादा कोई न होगा, जैसे तुम हो। मनुष्य की पहिचान तो है ही नहीं। सब को भला मानते हो। एक नहीं दो-दो भतीजों को देख लिया, पर अभी भी आँखें न खुलीं। मैं......मै जानती हूँ इन्हें और इनकी मातुश्री को। तुम क्या जानो ? तुम घर में रहे ही कहाँ, जब देखो तब लड़ाई पर। मैं घर में रही हूँ। मुझे मालूम है कि कैसी नागन है इनकी माँ। नागन से तो साँप ही पैदा होंगे, मनुष्य नहीं। कहाँ......कहाँ तक साँपों को दूध पिलाओगे ! अरे ! साँपों को 'धरावे' से कुछ न होगा, उनके लिये तो 'मारावे' ही चाहिए।

[रघुनाथराव उठकर उद्विग्नता से टहलने लगता है। आनन्दीबाई कुछ देर उसकी ओर देखती रहती है। फिर उठकर वह भी उसके साथ टहलने लगती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

आनन्दीबाई

इतनी उद्विग्नता......इतनी उद्विग्नता का आखिर कोई कारण भी हो ? जिस प्रकार तुम्हारा उन पर प्रेम है, उसी प्रकार उनका तुम पर होता, तो यह उद्विग्नता मेरी समझ में आती। **(कुछ रुककर)** और मैं तो यह पूछती हूँ कि तुम मनुष्य हो, या हो क्या ? अरे ! तुम भी बालाजी विश्वनाथ के ही वंशज हो या और किसी के ? बाजीराव के पुत्र, बालाजी बाजीराव के सगे भाई। माधवराव और नारायणराव यदि बालाजी बाजीराव के पुत्र हैं, तो तुम उनके भाई। पेशवा कुल का ही रक्त तो तुम्हारी नाड़ियों में भी बहता है। **(फिर कुछ रुककर)** और फिर मराठाशाही को इस स्थान पर यथार्थ में पहुँचाया किसने ? तुम-सा वीर आज तक कौन हुआ है मराठा इतिहास में ? क्या पिता के समय, और क्या भाई के, किसने युद्ध किये हैं ? किसने मैदान मारे हैं ? ऐसे-वैसे युद्ध तुमने जीते हों यह नहीं, अरे ! अफ़गान क़ौम सरीखी बहादुर क़ौम तक के तुमने पंजाब में दाँत खट्टे कर दिये और पंजाब प्रान्त विजय किया।

[रघुनाथराव अपनी वीरता की यह प्रशंसा सुनकर कुछ प्रसन्न हो फिर बैठ जाता है। आनन्दीबाई भी उसके निकट बैठती है।]

आनन्दीबाई

वही......वही वीर......महावीर......वही.........वही मराठा साम्राज्य के निर्माता तुम इस प्रकार बार-बार क़ैद में ! जिसने बड़े से बड़े संग्रामों में सफलता के सिवा और कुछ जाना ही नहीं, जिस शूर ने पराभव क्या है, उसे देखा ही नहीं, वही ......वही आज क्या ऐसा पतित हो गया कि कारावास में अपना जीवन बिताये ? **(कुछ रुककर)** अरे ! कृमि और कीट भी आघात

होने पर सिर उठा, बदला **लेने** को प्रहार किये बिना नहीं रहते, तुम तो मनुष्य हो, वीर......महावीर......मनुष्य......शूर......शूर शिरोमणि। **(कुछ रुककर)** और देखो, नागन के एक बच्चे को तो भगवान ने ठिकाने पहुँचा दिया, दूसरे को पहुँचा देंगे सुमेरसिंह और मुहम्मद यूसुफ़। पेशवा कुल में तुम्हारे सिवा फिर रह कौन जायगा, जो गद्दी पर बैठे ?

[रघुनाथराव उत्सुकता से आनन्दीबाई की ओर देखता है और आनन्दीबाई एकटक रघुनाथराव की ओर देखती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

आनन्दीबाई

जिसमें सच्चा पुरुषार्थ है, जिसने अपने पौरुष का एक नहीं, अगणित बार परिचय दिया है उसे मिलेगी पेशवाओं की गद्दी, और मिलेगी उसे, जिसकी नाड़ियों में भी पेशवाओं का ही रक्त है! **(फिर कुछ रुककर)** कल......कल समाप्त हो जायगी नारायण की इहलोक-लीला। काका को क़ैद करने का फल एक भतीजे को दिया भगवान ने और दूसरे को देंगे सुमेरसिंह और मुहम्मद यूसुफ़। अरे! हमारा तो नाम तक कोई न लेगा; संदेह तक किसी का नहीं हो सकता; हम तो क़ैद में हैं।

[रघुनाथराव फिर उठकर उद्विग्नता से टहलने लगता है। आनन्दीबाई कुछ देर उसकी ओर देखती रहती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

आनन्दीबाई

(खड़े होकर टहलते हुए) तुम्हारी बारबार इस उद्विग्नता पर मुझे आश्चर्य......महान् आश्चर्य होता है। जिस व्यक्ति ने युद्ध में दो, चार, दस नहीं, सैकड़ों, और सैकड़ों ही नहीं, हज़ारों मनु-

ष्यों को धराशायी किया और कराया है, जिस वीर ने रणभूमि में हज़ारों रुण्ड-मुण्डों का नृत्य देखा है, जिस शूर ने रक्त के छींटे नहीं, धब्बे नहीं, रक्त की नदियाँ बहायी हैं उस......उस व्यक्ति को एक दुबले-पतले......एक दुधमुँहें बच्चे के मारने के आयोजन और उचित आयोजन पर ऐसी......ऐसी उद्विग्नता......

[आनन्दीबाई ध्यान से रघुनाथराव के मुख की ओर देखती है। रघुनाथराव पृथ्वी की तरफ़ देखने लगता है।]

यवनिका

पहला दृश्य

स्थान — पूना में पेशवा के महल में पेशवा का बैठकख़ाना

समय — मध्याह्न

[बैठकख़ाने की दीवालों पर चित्रकारी है। चित्रकारी मराठा इतिहास के अनेकों दृश्यों की हैं। दीवालों में कई दरवाज़े और खिड़कियाँ हैं, पर बहुत बड़े नहीं, छोटे-छोटे। इन दरवाज़ों और खिड़कियों से बाहर के उद्यान के कुछ हिस्से दिख पड़ते हैं जो मध्याह्न के सूर्य की किरणों से आलोकित हैं। कमरे की छत से काँच के झाड़ और हंडियाँ झूल रहे हैं। कमरे की ज़मीन पर क़ालीन है और उस पर गद्दी तथा गद्दी पर अनेक मसनद। गद्दी पर रघुनाथराव बैठा हुआ है। रघुनाथराव आज मराठी ढंग का सफ़ेद अँगरखा और चौड़ी किनार की सफ़ेद धोती पहने है। मराठी लाल पगड़ी लगाये है तथा गले में ज़री की किनार का दुपट्टा लिये हुए है। उसका मुँह शोक और खिन्नता से तिलमिला रहा है। रघुनाथराव के पास ही अपनी साधारण वेष-भूषा में आनन्दीबाई बैठी है। वह अत्यन्त क्रोधभरी दृष्टि रघुनाथराव की ओर देख रही है। एक विचित्र प्रकार की सन्नाटा सारे कमरे में छाया हुआ है।]

आनन्दीबाई

(अत्यन्त क्रूर स्वर में) तो.........तो तुम इसी प्रकार मुँह बनाये बैठे रहोगे ? इसी प्रकार मुँह उतारे घूमा करोगे ?

रघुनाथराव

जो-जो तुम कहती हो, सब कुछ तो मैं करता जाता हूँ, पर मुख मेरा कैसा रहता है, यह मेरे हाथ की बात नहीं है।

आनन्दीबाई

(कुछ शान्त हो) कल के सदृश सब कुछ करने से लाभ क्या है? मुख है हृदय का दर्पण; यदि वही ठीक न रहा तो इधर-उधर जो थोड़ी-सी चर्चा सुन पड़ती है, वह उग्र रूप धारण कर सकती है। जो बातें संदिग्ध रूप में हो रही हैं, वे निश्चयात्मक रूप में होने लगेंगी।

रघुनाथराव

पर अपने मन को मैं क्या करूँ; वह मेरे हाथ में नहीं।

आनन्दीबाई

(फिर क्रोध से) मन का क्या करो, मन हाथ में नहीं! न जाने कैसा तुम्हारा मन है? उसे क़ाबू में रखना होगा।

रघुनाथराव

(लम्बी साँस लेकर) मैं प्रयत्न नहीं करता हूँ, परन्तु...... ...परन्तु......**(चुप हो जाता है।)**

आनन्दीबाई

(रघुनाथराव की ओर देखते हुए) परन्तु क्या?

[रघुनाथराव कोई उत्तर न दे चुपचाप सिर झुका लेता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुनाथराव

(एकाएक खड़े होकर) आनन्दी......आनन्दी......वह दृश्य मुझसे भुलाया नहीं भूलता; आक्रमण होते समय नारायण का चिल्लाकर मुझे......मुझे बुलाना, मुझसे लिपट जाना, मेरा उसे

छोड़कर भागना, उसी समय उसके नौकर चापाजी का आना उससे बचाने को लिपटना और उन क्रूर......महाक्रूर हत्यारों का चापाजी के साथ नारायण की हत्या करना......

आनन्दीबाई

और रणक्षेत्रों में तुमने ऐसी कितनी हत्याएँ देखी ही नहीं, पर कीं, और करायी हैं।

रघुनाथराव

(विचारते हुए बैठकर) वह......वह दूसरी बात है।

आनन्दीबाई

दूसरी बात कैसी? वहाँ हाड़-माँस के मनुष्य का संहार न होकर, क्या मिट्टी, लकड़ी, लोहे के पुतले मारे जाते हैं? वहाँ ख़ून न बह कर क्या पानी बहता है? **(कुछ रुककर)** और......
...और फिर रणक्षेत्र की वे हत्याएँ तुमने की हैं, तुम्हारी आज्ञा से हुई हैं। नारायण की हत्या से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है?

रघुनाथराव

(आश्चर्य से) मेरा सम्बन्ध! मेरा सम्बन्ध नहीं और किसका है?

आनन्दीबाई

(और भी आश्चर्य से) क्यों, तुमने इस विषय में क्या किया? तुम तो उस समय क़ैदी थे।

रघुनाथराव

पर क़ैद से ही सुमेरसिंह और मुहम्मद यूसुफ़ के पास वह पत्र भेजा था।

आनन्दीबाई

(क्रोध से) तो जो दूसरे कहते हैं, वह तुम स्वयं कहने लगे।

(कुछ रुककर) अच्छा, और यदि वह पत्र तुमने भेजा भी था, तो उसमें तो नारायणराव को धर-पकड़ के सम्बन्ध में ही लिखा था न ? उसने तुम्हें पकड़कर बन्दी बना रखा था, तुमने उसे पकड़-कर क़ैद करवाना चाहा।

रघुनाथराव

वह पत्र धर-पकड़ की आज्ञा न देकर मारने की आज्ञा देता है।

आनन्दीबाई

तुमने 'धरावे' लिखा था 'मारावे' नहीं। किसी दूसरे ने 'धरावे' के स्थान पर 'मारावे' कर दिया।

रघुनाथराव

पर मैं जानता था कि 'धरावे' के स्थान पर 'मारावे' कर दिया गया है। किसने किया है, यह भी मैं जानता था, और इतने पर भी मैंने उस हत्या को रोकने का कोई प्रयास नहीं किया। (कुछ रुककर एक लम्बी साँस ले) आनन्दी.........आनन्दी जब तक......जब तक इस पाप का कोई प्रायश्चित्त न कर लूँगा, तब तक मुझे क्षण भर भी विश्राम न मिलेगा। मैं पेशवा हो गया तो क्या हुआ, महाराष्ट्र की आज सारी सत्ता मेरे हाथ में है तो क्या हुआ, पर अपने को खोकर, इतना बड़ा मूल्य चुकाकर यह ख़रीद कोई अच्छा सौदा नहीं हुआ।

आनन्दीबाई

(कुछ शान्त होकर) बस इतनी सी बात ! प्रायश्चित्त ! प्राय-श्चित्त कभी भी तीर्थ पर चलकर कर लेंगे। चारों ओर से बढ़ते हुए शत्रुओं, विशेषकर हैदरअली और निज़ामअली का दमन कर लो, राजकाज की व्यवस्था कर दो, चले चलना फिर किसी

एकान्त तीर्थ पर और चुपचाप कर लेना यह प्रायश्चित्त।

रघुनाथराव

(उठकर इधर-उधर टहलते हुए) नहीं, आनन्दी, यह प्रायश्चित्त, ऐसा वैसा प्रायश्चित्त, इतना सरल प्रायश्चित्त न होगा।

आनन्दीबाई

(क्रोध से) रणक्षेत्र की हज़ारों हत्याओं के प्रायश्चित्त की कभी आवश्यकता न पड़ी, और जिस हत्या में तुम्हारा कोई हाथ नहीं, उसका प्रायश्चित्त। वह भी ऐसा वैसा प्रायश्चित्त, सरल प्रायश्चित्त न होगा।

रघुनाथराव

(बैठकर विचारपूर्वक) तुम बार-बार रणक्षेत्र की बात क्यों कहती हो ?

आनन्दीबाई

क्यों, वहाँ मनुष्य मारे न जाकर क्या उत्पन्न किये जाते हैं ?

रघुनाथराव

(और भी गम्भीरता से विचार करते हुए) सो मैं नहीं कहता, पर......पर इतना कह सकता हूँ कि रणक्षेत्र में जिन्हें तुम हत्या कहती हो उनमें से एक का भी मेरे मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, पर......पर इस......इस हत्या का.........क्या कहूँ ? **(कुछ रुककर)** आनन्दी, इस कृत्य का जब तक कोई समुचित प्रायश्चित्त न हो जायगा, तब तक......तब तक पल भर भी मुझे चैन न मिलेगा; न शत्रुओं का दमन होगा, न राज-काज की व्यवस्था। **(फिर कुछ रुककर)** और यह प्रायश्चित्त कैसा हो इस सम्बन्ध में मैं किसी ऐसे-वैसे व्यक्ति की सम्मति नहीं ले रहा हूँ।

आनन्दीबाई

(आश्चर्य से) किसी की सम्मति ले रहे हो ? किसकी सम्मति ले रहे हो ?

रघुनाथराव

महाराष्ट्र के सब से बड़े विवेकशील मनुष्य रामशास्त्री की सम्मति। और वे अपनी अमूल्य सम्मति देने आज ही आने वाले हैं।

आनन्दीबाई

(अत्यधिक आश्चर्य से चिल्लाकर) रामशास्त्री !........ रामशास्त्री की सम्मति ! ओह ! ओह !

लघु-यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—पेशवा के महल में आनन्दीबाई का कमरा।

समय—मध्याह्न

[कमरा पहले दृश्य के कमरे से मिलता जुलता है, इतना ही अन्तर है कि इसमें एक पलंग भी रखा है। एक गद्दी पर आनन्दीबाई बैठी हुई है। इसी के निकट सखाराम बापू बैठा है सखाराम अधेड़ अवस्था गेहुँए रंग और साधारण शरीर का मनुष्य है। बाल मराठी ढंग के हैं और बड़ी-बड़ी मूछें हैं। सिर पर मराठी ढंग की लाल पगड़ी है और शरीर पर मराठी ढंग का सफ़ेद अँगरखा तथा चौड़ी किनार की सफ़ेद धोती। गले में ज़री की किनार का दुपट्टा है।]

आनन्दीबाई

कारबारीजी, आपके सिवा इस राज्य में कभी भी कोई हमारा नहीं रहा।

सखाराम

यह आपकी कृपा है कि आप ऐसा समझती हैं।

आनन्दीबाई

और जो अपना होता है, उसी से समय पर सहायता भी मिलती है।

सखाराम

श्रीमन्त की और आपकी सेवा करना सदा मैंने अपना कर्त्तव्य माना है।

आनन्दीबाई

मैं कौन-सी बात नहीं जानती सखारामजी ? मुझे मालूम है कि माधवराव ने जब इन्हें बन्दी बनाया क्या तब, और नारायण-राव ने जब इन्हें क़ैद किया, क्या तब, दोनों ही बार आप उस घृणित कार्य के विरुद्ध थे।

सखाराम

मुझे हर्ष है, श्रीमती, आपको यह विश्वास है; पर मैं इस घृणित कार्य के विरुद्ध कैसे न होता ? मैं महाराष्ट्र के सारे इति-हास को जानता हूं। मुझे मालूम है कि श्रीमन्त बाजीराव और श्रीमन्त बालाजी बाजीराव पेशवों के महान् कार्यों और सफल-ताओं का कितना बड़ा श्रेय श्रीमन्त सरकार को है।

आनन्दीबाई

इन्हें इस प्रकार कष्ट देने का ही फल तो माधव और नारायण दोनों ने पाया, कारबारी साहब।

[सखाराम कोई उत्तर नहीं देता। आनन्दीबाई सखाराम की ओर देखती रहती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

आनन्दीबाई

(कुछ देर बाद) इनकी और आपकी तो बाल्यावस्था से मैत्री रही है, आप भलीभाँति जानते हैं कि कितना भावप्रधान स्वभाव है इनका।

सखाराम

मुझ से क्या छिपा है, श्रीमती।

आनन्दीबाई

भावप्रधान स्वभाव के कारण ही जब मृत्यु-शैया पर माधवराव ने कारागृह से मुक्तकर बुलाया और अपने भाई नारायणराव को सौंपा तब सब बातें भूल गये थे और नारायण को पुत्र से भी अधिक मानने लगे। नारायणराव ने फिर बन्दी किया, पर जब उसके हत्यारे उसपर टूटे और वह चिल्लाया, तब नारायण ने क़ैद में रखा था, इसे भूल उसकी सहायता के लिए भी दौड़ पड़े।

सखाराम

ये दो घटनाएँ ही नहीं, श्रीमती, उनके भावप्रधान स्वभाव के प्रमाण की अनेक घटनाएँ हैं, जिन्हें आपसे मैं कहीं अधिक जानता हूँ। **(कुछ रुककर)** और, श्रीमतीजी, बड़े-बड़े कार्य भाव-प्रधान व्यक्ति ही कर सकता है, यह भी समझ लीजिए।

आनन्दीबाई

परन्तु अनेक बार इस भाव-प्रधानता के कारण वह अनर्थ भी कर डालता है, इससे भी इंकार नहीं किया जा सकता। आज जो मैंने आपको कष्ट दिया है; वह इनकी एक ऐसी ही नयी सनक के कारण।

सखाराम

अच्छा, और कोई नयी बात हुई है?

आनन्दीबाई

नारायणराव की हत्या की इनके मन पर बड़ी गहरी चोट पहुँची है।

सखाराम

सो तो स्वाभाविक ही है। ये काका हैं, वे भतीजे थे।

आनन्दीबाई

हाँ, पर नातेदारी के कारण जो दुःख होता उससे यह दुःख अलग प्रकार का है।

सखाराम

(उत्सुकता से) कैसा?

आनन्दीबाई

(गला साफ़ करते हुए) आपसे तो भली-बुरी सभी प्रकार की बातें कही जा सकती हैं, सखारामजी!

सखाराम

यदि आप मुझे शुभचिन्तक समझती हैं, तो किसी प्रकार का पशोपेश होना ही नहीं चाहिए।

आनन्दीबाई

(धीरे-धीरे) ये अपने को ही नारायणराव की हत्या का कारण मानते हैं।

[सखाराम का मुँह एकदम नीचे झुक जाता है। आनन्दीबाई उसकी ओर देखने लगती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

सखाराम

(धीरे-धीरे सिर उठाकर) वे कदाचित् यह सोचते होंगे कि नारायणरावजी ने उन्हें बन्दी किया था, इसीलिए कुछ सैनिकों ने उत्तेजित होकर उनकी हत्या कर डाली, अतः वे ही इस हत्या के कारण हुए।

आनन्दीबाई

(और भी धीरे) नहीं, इतना ही नहीं है।

सखाराम

(आनन्दीबाई की ओर देखते हुए) तब!

आनन्दीबाई

(फिर गला साफ़ करते हुए) आपको सारी बातें सच-सच कह दूँगी।

सखाराम

मैंने तो पहले ही निवेदन किया, श्रीमतीजी को मुझसे किसी प्रकार के संकोच करने की आवश्यकता नहीं है।

आनन्दीबाई

आप जानते हैं, कारबारी साहब, कैद में मनुष्य अपने आपे में नहीं रहता।

सखाराम

श्रीमन्त के सदृश व्यक्ति का रह सकना तो असम्भव बात है।

आनन्दीबाई

वहाँ से इन्होंने सुमेरसिंह और मुहम्मद यूसुफ़ को एक पत्र भेजा जिसमें लिखा था कि वे नारायण को पकड़ लें।

सखाराम

उस पत्र का हाल मैंने सुना था; पर मुझे विश्वास नहीं हुआ था।

आनन्दीबाई

नहीं, वह पत्र लिखा गया था, यह सत्य है। परन्तु इन्होंने नारायण के पकड़ने के लिए ही लिखा था; और स्वयं के पकड़-कर कैद में डाले जाने, तथा कैदखाने में पड़े रहने के कारण, उनका वहाँ से इस प्रकार लिखना स्वाभाविक ही था।

[सखाराम कुछ उत्तर नहीं देता। कुछ देर निस्तब्धता।]

आनन्दीबाई

उस पत्र में न जाने किसने 'धरावे' शब्द को काटकर

'माराबे' कर दिया। ये इसी पत्र के कारण अपने को नारायण का हत्यारा समझते हैं। दिन रात शोक में डूबे रहते हैं; सब काम करते हैं, पर सदा अनमने रहते हैं; कहते हैं इस पाप का इन्हें कोई प्रायश्चित्त करना होगा।

[सखाराम कुछ नहीं कहता। फिर निस्तब्धता।]

सखाराम

(कुछ देर बाद) नया शोक है, समय बड़े से बड़ा घाव भी भर देता है।

आनन्दीबाई

मैं भी ऐसा ही समझती थी, पर इसी उद्वेग में इन्होंने एक अनर्थ कर डाला है।

सखाराम

(उत्सुकता से) कैसा?

आनन्दीबाई

इन्हें कैसा प्रायश्चित्त करना चाहिए इसके लिए इन्होंने रामशास्त्री से व्यवस्था माँगी है।

[रामशास्त्री का नाम सुनते ही सखाराम चौंककर इस प्रकार खड़ा हो जाता है जैसे भूकम्प से सामने की पृथ्वी फट रही हो। उसके मुख का सारा रंग हवा हो जाता है। आनन्दीबाई एकटक उसकी ओर देखती है।]

सखाराम

(धीरे-धीरे अपने को सँभालते हुए) हाँ, श्रीमतीजी, अनर्थ, घोर अनर्थ हुआ है, इसमें सन्देह नहीं। यह शास्त्री एक विचित्र मनुष्य है। न जाने किस समय क्या कर डाले।

आनन्दीबाई

(घबड़ाहट से) आप...आप भी यह मानते हैं न कि अनर्थ हुआ है ?

सखाराम

अवश्य मानता हूँ। (बैठता है।)

आनन्दीबाई

इसीलिए......इसीलिए मैंने आपको बुलाया है। आप ही एक ऐसे व्यक्ति हैं कि परिस्थिति को सुधार सकते हैं। रामशास्त्री से मिलकर उसे समझा सकते हैं। वह आज ही अपनी व्यवस्था देने इनके पास आनेवाला है।

[सखाराम सिर झुका लेता है। आनन्दीबाई उसकी ओर देखती रहती है।]

लघु-यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—रामशास्त्री के घर का बैठकखाना

समय—मध्याह्न के उपरान्त

[कमरा क्या एक छोटा सा कोठा है। दीवालें स्वच्छ पुती हुई हैं, पर एकदम सादी हैं, बिना किसी चित्रकारी अथवा सजावट आदि के। कोठे की छत काठ के खम्भों पर है और खम्भे भी बिलकुल सादे हैं, बिना किसी नक्काशी आदि के। कोठे की छत से काँच के झाड़, हँडियाँ आदि नहीं लटक रहे हैं। ज़मीन पर जाजम है और उस पर श्वेत चादर और खोलियों से ढँके गद्दे तकिये। कोई भी बेशक़ीमती सामान कोठे में नहीं दिखता, पर इतने पर भी कोठा अत्यन्त स्वच्छ दिखायी पड़ता है। रामशास्त्री गद्दे पर बैठा हुआ सरौते से सुपारी काट रहा है। वह अधेड़ अवस्था, गेहुएँ रंग और साधारण शरीर का मनुष्य है। बाल मराठी ढंग के हैं; मूँछें बड़ी बड़ी। शरीर पर एक छोटा सफ़ेद कुरता और चौड़ी किनार की सफ़ेद धोती पहने हुए है। उसी के निकट सखाराम बापू बैठा हुआ है। सखाराम सिर नीचा किए हुए गम्भीरता से कुछ सोच रहा है। कोठे में सुपारी काटने के सिवा और किसी प्रकार का शब्द नहीं है।]

सखाराम

(धीरे-धीरे सिर उठाकर) तो......शास्त्रीजी, श्रीमन्त से कुछ

कहने के पूर्व आप कारबारी से भी सलाह करने की कृपा नहीं करेंगे ?

रामशास्त्री

(सुपारी काटते हुए) सखारामजी, इस प्रश्न का कोई भी सम्बन्ध राज्य से नहीं, यह मैं नहीं कहता परन्तु यथार्थ में यह श्रीमन्त का व्यक्तिगत प्रश्न है। और अपने व्यक्तिगत प्रश्न के संबंध में श्रीमन्त चाहें तो कारबारी से सलाह कर सकते हैं, मैं कैसे कर सकता हूँ ?

सखाराम

(विचारते हुए) परन्तु उनके पेशवा होने के पश्चात् उनके व्यक्तिगत प्रश्न भी यथार्थ में राज्य के प्रश्न हो जाते हैं; उनकी हर बात, उनके हर काम से राज्य का संबंध है।

रामशास्त्री

(सुपारी काटते हुए ही विचार करते-करते) आपके कथन में बहुत दूर तक सत्यता है, यह मैं स्वीकार करता हूं, परन्तु एक बात पूछूँ ?

सखाराम

(उत्सुकता से) अवश्य।

रामशास्त्री

जो प्रश्न श्रीमन्त ने मेरे सामने रखा है, और जिस संबंध में वे मेरी व्यवस्था चाहते हैं, उसने आपको क्यों इतना विचलित कर दिया है कि बिना मेरे कष्ट दिये ही आप अपनी सलाह देने मेरे पास पधारे हैं ?

सखाराम

(कुछ चकपकाकर, पर शीघ्र ही अपने को सम्हालते हुए) विचलित ! विचलित होना तो सखाराम बापू जानता ही नहीं, शास्त्रीजी, परन्तु जो प्रश्न आपके पास निर्णय के लिए आया है,

वह श्रीमन्त के सारे भावी जीवन से सम्बन्ध रखता है, उनके जीवन से राज्य का सम्बन्ध है। विशेषकर इस समय जब कि राज-काज उथल-पुथल हो रहा है, एक ओर हैदरअली अपने पुत्र टीपू के सेनापतित्व में सेना कूच करा रहा है, दूसरी ओर निज़ाम-अली बढ़ रहा है, मराठा सरदारों में सींधिया, होलकर, भोंसले, गायकवाड़ किसी की भी मनोवृत्ति का हमें ठीक पता नहीं, जो प्रश्न आपके सम्मुख है, उसके संबंध में आपकी बतायी हुई व्य-वस्था राजकाज पर प्रभाव, महान् प्रभाव डाल सकती है। इस विषय का पता लगते ही यदि मैं स्वयं आपके पास न आता तो अपने को अपने कारबारी के कर्त्तव्य से च्युत मानता। शास्त्रीजी, आप भी राज्य के एक कर्मचारी हैं, और आपका भी यह कर्त्तव्य है कि आप अपनी व्यवस्था सारी परिस्थिति को ध्यान में रखकर देने की कृपा करें।

रामशास्त्री

(सुपारी काटते काटते ही मुस्कराते हुए) आपके इस लम्बे-चौड़े उपदेश के पश्चात् मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि मेरा क्या कर्त्तव्य है, इसे मैं भली भाँति समझता हूँ।

[सखाराम कोई उत्तर न देकर सिर झुका लेता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

सखाराम

(कुछ देर पश्चात् सिर उठाकर) तो इस सम्बन्ध में आप मुझ से और कोई बातचीत न करना चाहेंगे ?

रामशास्त्री

मुझे खेद के साथ कहना पड़ता कि आपका अनुमान सत्य है।

[सखाराम एकाएक उठ खड़ा होता है और रामशास्त्री को प्रणाम कर दरवाज़े की ओर बढ़ता है। रामशास्त्री खड़े हो, सखाराम को प्रणाम का विनम्रतापूर्वक उत्तर दे पहुँचाने के लिए उसके पीछे पीछे जाता है।]

लघु-यवनिका

चौथा दृश्य

स्थान—पेशवा का बैठकखाना

समय—अपराह्न

[दृश्य वैसा ही है जैसा पहले दृश्य में था। रघुनाथराव अत्यधिक उद्विग्नता से इधर-उधर टहल रहा है। आनन्दीबाई का प्रवेश आनन्दीबाई का मुख अत्यन्त उद्विग्न है।]

रघुनाथराव

(आनन्दीबाई को देख, उसके निकट आकर, उत्सुकता से) सखाराम लौट आया?

आनन्दीबाई

हाँ, लौट आया।

रघुनाथराव

क्या कहा, उससे रामशास्त्री ने?

आनन्दीबाई

(बैठते हुए) कुछ नहीं।

रघुनाथराव

(आनन्दीबाई के निकट बैठते हुए) कुछ नहीं!

आनन्दीबाई

हाँ, कुछ नहीं; उसने कहा प्रश्न श्रीमन्त का व्यक्तिगत प्रश्न है, सखाराम से उस विषय में कोई बात नहीं की जा सकती।

रघुनाथराव

और सखाराम ने शास्त्रीजी से क्या कहा ?

आनन्दीबाई

जो कुछ वह कह सकता था, सब कुछ। उसने देश की सारी परिस्थिति बतायी, शास्त्री की व्यवस्था की उस परिस्थिति पर कितना प्रभाव पड़ सकता है, यह कहा, और न जाने क्या-क्या कहा।

रघुनाथराव

और सारे कथन का शास्त्रीजी पर क्या प्रभाव पड़ा ?

आनन्दीबाई

प्रभाव पड़ता है हृदय रखनेवाले मनुष्य पर, किन्तु जो हृदय-हीन हो, उसपर कौन बात प्रभाव डाल सकती है ? शास्त्री हाड़-माँस का मनुष्य होते हुए भी यथार्थ में मनुष्य थोड़े ही है। काष्ठ-धातु या पाषाण की मूर्ति पर भी चाहे प्रभाव पड़ जाय, पर शास्त्री पर नहीं पड़ सकता। **(कुछ रुककर)** परन्तु मुझे तो आश्चर्य यह है कि तुमने बैठे-ठाले एक समस्या क्यों खड़ी कर दी ?...... यदि शास्त्री मेरी समझ में नहीं आता, तो तुम तो और भी नहीं।

[रघुनाथराव कोई उत्तर न देकर इधर-उधर टहलने लगता है। सन्तरी का प्रवेश। वह ऊँचा पूरा, मोटा-ताज़ा व्यक्ति है। उस समय की मराठी वरदी लगाये हुए है। आयुधों से भी सुस-ज्जित है।]

सन्तरी

(प्रणाम कर) श्रीमन्त, रामशास्त्रीजी पधारे हैं, श्रीमन्त के दर्शन के इच्छुक हैं।

रघुनाथराव

(उठकर) उन्हें आदर सहित भेज दो।

आनन्दीबाई

(उठकर) न जाने भाग्य में और क्या क्या बदा है ? (कुछ रुककर) पर देखो, रामशास्त्री ने यदि कोई अंड-बंड व्यवस्था दी तो वे भी उसी रास्ते जायँगे जिस रास्ते नारायण......

रघुनाथराव

(क्रोध से) निरर्थक बकवाद अच्छी बात नहीं होती।

[आनन्दीबाई का प्रस्थान। रघुनाथराव और अधिक उद्विग्नता से इधर-उधर टहलता है। कुछ ही देर में रामशास्त्री का प्रवेश। वह अब सफ़ेद अंगरखा पहने है। सिर पर मराठी लाल पगड़ी लगाये है और गले में डुपट्टा डाले। रघुनाथराव उसे प्रणाम करता है। रामशास्त्री आशीर्वाद देता है। रघुनाथराव मसनद से टिककर गद्दी पर बैठता है, रामशास्त्री उसके सामने।]

रामशास्त्री

मैंने सारे प्रश्न पर अच्छी प्रकार विचार कर लिया है, श्रीमन्त।

रघुनाथराव

(भर्राये हुए स्वर में) और आपकी क्या व्यवस्था है, शास्त्रीजी ?

रामशास्त्री

मेरा मत है, श्रीमन्त, कि नारायणरावजी की हत्या का पूरा उत्तरदायित्व आप पर है। हत्या का प्रायश्चित्त अपनी स्वयं की हत्या होता है; और कुछ नहीं। आपकी साध यदि जीवित रहने की भी हो तो आपका जीवन अब सुख और सफ-

लता से नहीं कट सकता। आप यदि गद्दी पर रहे तो आपके राज्य का उत्कर्ष नहीं, बल्कि उसका पतन ही होगा। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, वहाँ तक मैं तो अब क्षणमात्र को भी इस राज्य का कर्मचारी न रह सकूँगा।

[एकाएक सखाराम का प्रवेश।]

सखाराम

शास्त्रीजी, शास्त्रीजी, आप कैसी......कैसी व्यवस्था दे रहे हैं।

रामशास्त्री

(मुस्कराकर) ओह! आप छिपे हुए मेरी व्यवस्था सुनर हे थे; यह खेद की बात है, कारबारीजी; आपका यह आचरण न आपके लिए शोभाप्रद है और न राज्य के लिए।

सखाराम

यह समय किसी की शोभा रखने का समय नहीं है, शास्त्रीजी, यह समय है महाराष्ट्र के जीवन-मरण का। मुझे खेद है आप अपनी व्यवस्था देते समय देश और राज्य की परिस्थिति पर थोड़ा भी ध्यान नहीं रख रहे हैं।

रामशास्त्री

ऐसी व्यवस्थाएँ परिस्थिति के अनुसार नहीं दी जातीं, कारबारीजो, वे हर समय और हर परिस्थिति में एकसी ही रहती हैं।

[आनन्दीबाई का शीघ्रता से प्रवेश।]

आनन्दीबाई

परन्तु......परन्तु ऐसी व्यवस्था देनेवाले की, उसकी स्वयं की क्या दशा हो सकती है, इस पर भी थोड़ा ध्यान रखना चाहिए। शास्त्री, तुम राज्य के एक कर्मचारी हो; ......सुना

तुमने ? स्वयं श्रीमन्त के लिए, उनके सम्मुख, इस प्रकार की बातें व्यवस्था नहीं, प्रलाप हैं, घोर प्रलाप ! अपना पद छोड़कर तुम निश्चिन्त नहीं हो सकते, तुम्हारा स्थान होगा अब कारागार में।

रामशास्त्री

(मुस्कराकर) मुझे अपनी थोड़ी भी चिन्ता नहीं है, श्रीमतीजी, मैं हर परिस्थिति के लिए प्रस्तुत......

रघुनाथराव

(मानो सोते से जगा हो) हैं ! यह क्या......यह क्या हो रहा है, यहाँ ! (रामशास्त्री से) शास्त्रीजी आप घर पधारें।

रामशास्त्री

(उठते हुए) जैसी आज्ञा।

[रामशास्त्री बिना किसी प्रकार की शीघ्रता के धीरे-धीरे दरवाज़े की ओर बढ़ता है। रघुनाथराव उसे पहुँचाने के लिए उसके पीछे पीछे जाता है। सखाराम सिर झुकाये हुए खड़ा रहता है। आनन्दीबाई क्रोध से तिलमिलाते हुए मुख से नेत्रों द्वारा अग्नि सी बरसाती हुई जानेवाले रामशास्त्री की ओर और उसे पहुँचानेवाले रघुनाथराव की ओर देखती है।]

यवनिका

उपसंहार

स्थान—गोदावरी के तट पर कोपरगाँव में रघुनाथराव के मकान का एक कमरा।

समय—सन्ध्या

[देहाती मकान होने पर भी कमरे की दीवालें पक्की जान पड़ती हैं। वे स्वच्छता से सफ़ेद पुती हुई हैं। उनमें दरवाज़े और खिड़कियाँ हैं। पीछे की खिड़कियों से बाहर एक ओर दूर पर गोदावरी के प्रवाह का कुछ भाग दिखाई देता है और दूसरी ओर कोपरगाँव का कुछ हिस्सा। डूबते हुए सूर्य की किरणें बाहर के दृश्य को रँग रही हैं। कमरे की छत लकड़ी के खंभों पर है। ज़मीन गोबर से लिपी हुई है। एक ओर थोड़ी सी बिछावन है। कमरे में कोई चित्रकारी, कोई सजावट इत्यादि नहीं है, कमरा एकदम सादा है। गद्दी पर मसनद के सहारे रघुनाथराव लेटा हुआ है। वह अत्यन्त वृद्ध और दुर्बल हो गया है; सारे बाल सन के से सफ़ेद। हज़ामत भी कुछ बढ़ी हुई है। आँखों के चारों ओर गढ़े पड़ गये हैं और कालिमा आ गयी है। मुख पर यत्र-तत्र झुर्रियाँ भी दीख पड़ती हैं। रघुनाथराव का शरीर एक शाल से ढका हुआ है, केवल मुख और हाथ बाहर हैं। उसके पास ही आनन्दीबाई बैठी हुई है। उसकी उम्र भी कुछ बढ़ गयी सी जान पड़ती है, पर उसके मुख और शरीर में रघुनाथराव के सदृश कोई महान् परिवर्तन नहीं

हुआ है। रघुनाथराव आनन्दीबाई की ओर देखते हुए कुछ कह रहा है।]

रघुनाथराव

हाँ,......हाँ, मृत्युशैय्या......मृत्युशैय्या पर ही कदाचित् मनुष्य यथार्थता को देख सकता है।

[आनन्दीबाई एक निराशा भरी दृष्टि से रघुनाथराव की ओर देखती है; कुछ कहती नहीं।]

रघुनाथराव

कितनी...कितनी निराशा भरी है, तुम्हारी दृष्टि में, आनन्दी। **(कुछरुककर)** ठीक भी है, सच्ची वस्तुस्थिति को न समझ, आशा की हवा में उड़ते रहना बुद्धिमानी तो नहीं कही जा सकती। जाने के लिए ही हम सब आये हैं, कोई कभी जाता है, और कोई कभी, और जो जाता है, उसे रहनेवाला रोक नहीं सकता; कभी नहीं, आनन्दी, तब निराशा होती है, संसार में सब से बड़ी निराशा का यही तो अवसर है। वह यदि तुम्हें हो रही है तो आश्चर्य की बात नहीं।

[आनन्दीबाई के नेत्रों में आँसू छलछला आते हैं, पर वह कुछ बोलती नहीं। रघुनाथराव कुछ देर उसकी ओर देखता रहता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुनाथराव

तुम्हें दुःख होना भी स्वाभाविक है, आनन्दी, हिन्दू-पत्नी को पति के जाने से अधिक किस बात से दुःख हो सकता है? पर... ...पर, आनन्दी, मुझे......मुझे जाने का दुःख नहीं हो रहा है; मुझे......मुझे तो ऐसा जान पड़ रहा है जैसे......जैसे मैं किसी जटिल बंधन से मुक्त हो रहा हूँ और......और इसका कदाचित्

यह कारण है कि मैं आज इस मृत्यु-शैय्या पर जो कुछ देख रहा हूँ, जैसी यथार्थता, वह इसके पहले मैंने जीवन में कभी नहीं देखी। **(कुछ रुककर)** सुनोगी, आनन्दी, मैं जो कुछ देख रहा हूँ, उसे सुनोगी ?

[आनन्दीबाई कुछ न कह उत्सुकता भरी दृष्टि से रघुनाथराव की ओर देखती है, रघुनाथराव ध्यान से उसकी ओर। कुछ देर निस्तब्धता]

रघुनाथराव

कुछ कह सकना तो कदाचित् तुम्हारे लिये आज संभव नहीं है, पर तुम्हारी दृष्टि से जान पड़ता है, तुम सुनोगी। **(कुछ रुककर)** अच्छा, सुनो, आनन्दी, मैंने कहा न मनुष्य मृत्यु-शैय्या पर कदाचित् यथार्थता देख सकता है। **(गम्भीरता-पूर्वक सोचते हुए)** इसका एक ही कारण हो सकता है। जहाँ वह रहा है वहाँ से सदा के लिए जाने को उसे तैयार होना पड़ता है। जो कुछ करता है, उसे सदा के लिए उसको बन्द करना पड़ता है। जहाँ वह रहता है, और हर साँस में कुछ न कुछ करता है, वहाँ से सदा के लिए जाने के पहले, वह कार्य सदा के लिए बन्द करने के पूर्व, जीवन-मुक्त ही जीवन को सच्ची निस्पृहता की दृष्टि से देख सकता है, साधारण मनुष्य नहीं; और जब तक सच्ची निस्पृहता की दृष्टि से कोई वस्तु न देखी जाय तब तक यथार्थता क्या है, यह दिखता ही नहीं। **(कुछ रुककर)** इसी......इसीलिए मृत्यु-शैय्या पर ही कदाचित् साधारण मनुष्य यथार्थता देख सकता है। **(फिर कुछ रुककर)** आनन्दी, मैं जा रहा हूँ, यह मैं जानता हूँ। इसके विपरीत चाहे तुम कहो, चाहे चिकित्सक, मुझे विश्वास ही नहीं होता। मेरा यह जीवन समाप्त हो रहा है, इससे

मेरा कोई प्रयोजन रहनेवाला नहीं। इसी......इसीलिए आज मुझे अपना बिताया हुआ जीवन, उसकी एक-एक घटना जिस प्रकार दिख रही है, जैसी यथार्थ, वैसी इसके पहले कभी नहीं दिखी। तुम्हारे द्वारा उठाये गये एक महान् प्रश्न का उत्तर, आज जिस प्रकार मेरी समझ में आ रहा है, उस प्रकार इसके पहले कभी नहीं आया; और यथार्थ में मेरा जीवन तुम्हारे उसी प्रश्न की चाहरदीवारी के अन्दर आ जाता है। **(फिर कुछ रुक-कर, प्रश्न-सूचक दृष्टि से आनन्दीबाई को देखते हुए)** याद है, एक बार तुमने मुझसे कहा था कि "जिस व्यक्ति ने युद्ध में दो चार दस नहीं, सैकड़ों, और सैकड़ों ही नहीं, हज़ारों मनुष्यों को धरा-शायी किया और कराया है, जिस वीर ने रण-भूमि में हज़ारो रुण्ड-मुण्डों का नृत्य देखा है, जिस शूर ने रक्त के छींटे नहीं, धब्बे नहीं, रक्त की नदियाँ बहायी हैं, उस व्यक्ति की एक दुबले-पतले..... एक दुध-मुँहे बच्चे के मारने के आयोजन और उचित आयोजन पर ऐसी......ऐसी उद्विग्नता......।"

[रघुनाथराव चुप हो जाता है। आनन्दीबाई कोई उत्तर तो नहीं देती, पर ऐसी दृष्टि से, मानो उसे उसका कथन याद आ गया है, रघुनाथराव की ओर देखती है।]

रघुनाथराव

(कुछ देर बाद आनन्दीबाई की ओर ही देखते हुए) आनन्दी, तुम्हारा यह प्रश्न साधारण प्रश्न नहीं था, उस समय भी मुझे साधारण प्रश्न तो नहीं दिखा, पर इसका समुचित उत्तर मुझे नहीं सूझा। उस दिन के पश्चात्, नारायण की हत्या के बाद भी, तुमने इस बात को कई बार उठाया। जब-जब तुमने मुझसे यह बात कही, मैंने कभी भी इसे मामूली बात नहीं समझी, परन्तु इसका उत्तर

कभी भी मुझे न सूझ पड़ा। सचमुच ही ऐसे व्यक्ति के लिए, जिसने रणक्षेत्र में हज़ारों मनुष्यों का संहार किया और कराया हो, उन दृश्यों को देखा हो, एक दुध-मुँहे बच्चे की हत्या कोई बड़ी चीज़ नहीं हो सकती। पर......पर आनन्दी, तुम जानती हो नारायण की हत्या आज दस वर्षों से सदा ही मेरे लिए बड़ी, बहुत बड़ी......सबसे बड़ी चीज़ रही है। मैं इसे क्षण मात्र को भी नहीं भूल सका, और......और इसका क्या कारण था यह यद्यपि अब तक, मेरी समझ में नहीं आया था, पर आज......आज, आनन्दी, स्पष्ट रूप से समझ में आ रहा है।

[आनन्दीबाई उत्सुकता से रघुनाथराव की तरफ देखती है। रघुनाथराव कुछ देर के लिए नेत्र बन्द कर लेता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुनाथराव

(कुछ देर बाद नेत्र खोल, आनन्दीबाई की ओर देखते हुए) आनन्दी, संसार में महत्त्व है उद्देश्य को, कार्य को नहीं। युद्ध में हज़ारों मनुष्यों को मैंने धराशायी किया और कराया था, एक महान् उद्देश्य के लिए, उसमें किसी नीच भावना, किसी षड्यन्त्र, किसी धोखे-धन्धे को स्थान नहीं था। उस समय मैं वीर था, सच्चा वीर, शूर था, शूर-शिरोमणि। फिर जो कुछ मैंने किया था अपने लिए नहीं, अपने साढ़े तीन हाथ के शरीर के लिए नहीं मराठा-साम्राज्य के लिए।......पिताजी और भाई साहब उसके सच्चे उत्तराधिकारी थे उनके लिए। पर......पर नारायण ......नारायण की हत्या......किस महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए की गयी, किस महान् साम्राज्य की स्थापना, या रक्षा के लिए की गयी? **(कुछ रुककर)** नारायण साम्राज्य का सच्चा

उत्तराधिकारी था, उसका वध हुआ तुम्हारी और मेरी राक्षसी-महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए; मैं पेशवा को गद्दी पर बैठूँ, इसके लिए, मेरे और तुम्हारे साढ़े तीन हाथ के शरीरों के लिए। **(कुछ रुककर)** इसी कारण वह किसी वीरता, किसी शूरता का कृत्य नहीं था, वह था षड्यन्त्र, नीच भावनाओं से भरा हुआ षड्यन्त्र! धोखा! बुरे से बुरा धोखा। **(फिर कुछ रुककर)** और...माधव अथवा नारायण ने मुझे कैद किया था, इसलिए मुझे नारायण की हत्या का अधिकार था, यह तो कोई युक्ति ही नहीं है। यदि उन्होंने कोई बुरा काम भी किया था तो उसके कारण मुझे उससे भी अधिक बुरे कार्य करने का कोई अधिकार नहीं मिल जाता। दो बुरे काम मिलकर एक अच्छा कार्य नहीं बन सकता।

[रघुनाथराव फिर आँखें बन्द कर चुप हो जाता है। आनन्दीबाई खिड़की से बाहर की ओर देखने लगती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुनाथराव

(आँखें खोलकर फिर आनन्दीबाई की ओर देखते हुए) और, आनन्दी, यह दलील कि मैंने वह हत्या नहीं करायी, कितनी... कितनी लचर है! कितनी...कितनी थोथी है, यथार्थ में उस हत्या का मैं...मैं ही कारण हूँ। जब सुमेरसिंह और मुहम्मद यूसुफ़ के पत्र में तुमने 'धरावे' के स्थान पर 'मारावे' शब्द किया, तब मैंने उसका कितना हलका-सा विरोध किया था। मेरे हृदय में द्वन्द्व न मचा हो यह नहीं, पर उस द्वन्द्व में पेशवा होने की भावना का पलड़ा बहुत भारी था, इसी......इसीलिए तो उस विरोध में इतना हलकापन था; और......और एक बात और। वह विरोध था हत्या के विरुद्ध भावना को संतुष्ट करने के लिए। इससे तो

कहीं अच्छा था कि मैं उस हत्या को करता, या कराता और उसकी सारी ज़िम्मेदारी अपने सिर ले लेता। अपने लाभ के लिए दूसरे से बुरा कार्य करा, स्वयं उसे बुरा कह, अपने आपको संतुष्ट करने का प्रयत्न तो बुरा काम करने से भी कहीं अधिक बुरा और नीच कार्य है। **(फिर कुछ रुककर)** इसके पश्चात् फिर यह वृत्ति और आगे बढ़ी। जब उस हत्या की कुछ चर्चा सुन पड़ने लगी तब रामशास्त्री के सदृश महापुरुष के सिर उस हत्या को मढ़ देने की सूझी। उनसे प्रायश्चित्त की व्यवस्था देने के लिए इसलिए कहा कि वे राजकर्मचारी थे, पेशवा के भृत्य। समझा, वे छोटा-मोटा कोई प्रायश्चित्त बता देंगे। वे यही करें, इसलिए तुमसे कह सखाराम को उनके पास भिजवाया, पर जब उन्होंने किसी की न सुन हत्या के लिए आत्म हत्या की व्यवस्था दी, तब...तब क्या किया मैंने?...कुछ नहीं, आनन्दी, कुछ नहीं। **(फिर कुछ रुककर)** और...और यदि तुम्हारे कथनानुसार रामशास्त्री को दण्ड नहीं दिया, तो इसलिए नहीं कि मैं रामशास्त्री से प्रसन्न था पर इसलिए जिसमें बात ढँक मुँद जाय और अधिक बढ़ने न पाय।

[रघुनाथराव चुप होकर फिर नेत्र बन्द कर लेता है। आनन्दी-बाई फिर खिड़की से बाहर देखने लगती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुनाथराव

आनन्दी, बुरा काम किया यही नहीं, उसका प्रायश्चित्त नहीं किया, यही नहीं, उसके भले फल भी खाना चाहे। यह......यह कैसे सम्भव था? रामशास्त्री सदृश महात्मा की भविष्यवाणी झूठ थोड़े ही हो सकती थी। उन्होंने कहा था—"आपका जीवन अब सुख और सफलता से नहीं कट सकता।" दस वर्षों के पहले दुःख और असफलता किसे कहते हैं यह मैं नहीं जानता था और इन

दस वर्षों में दस क्षण भी सुख से नहीं कटे। किसी काम में भी सफलता न मिली। **(कुछ रुककर)** और......और उन्होंने यह भी कहा था—"आपके राज्य का उत्कर्ष न हो सकेगा, उसका पतन ही होगा।" आनन्दी, मेरे द्वारा जिस मराठा-साम्राज्य का निर्माण हुआ था वही मेरे द्वारा समाप्त भी हो गया। **(फिर कुछ रुककर एकदम उत्तेजित स्वर में)** आनन्दी! आनन्दी! आज......आज मुझे सारी वस्तुस्थिति जितनी यथार्थ अवस्था में दिख रही है, उतनी इसके पहले कभी नहीं दिखी। **(फिर कुछ रुककर, और उत्तेजित स्वर में)** आह! आह! नारायण के संहार के साथ ही साथ महाराष्ट्र का भी संहार हो गया, मेरा......मेरा तो कुछ भी न बचा। पेशवाई गयी .....सतारा गया......पूना गया......इस गाँव......गाँव में रहकर सन्ध्या और तपण के पानी से नारायण के ख़ून के धब्बे धो रहा हूँ पर......पर......**(हाथों को देखते हुए)** कहाँ मिट रहे हैं वे दाग़? **(फिर कुछ रुककर, उसी प्रकार उत्तेजित स्वर में, पर अटक-अटककर)** और यह......यह हुआ मेरे...... मेरे षड्यन्त्रों से।......इस पाप......इस पाप का प्रायश्चित्त भी यदि मैंने दस वर्ष पूर्व रामशास्त्री की आज्ञानुसार कर दिया होता, तो ......तो भी कदाचित् महाराष्ट्र बच जाता, मैं भी स्वर्ग जाता पर अब......अब तो......**(सामने देखते हुए एकाएक उठकर)** न जाने किस नरक में जाऊँगा, और... .और......कितने......कितने जन्मों तक मुझे इस पाप का प्रायश्चित्त......प्रायश्चित्त......!

[रघुनाथराव एकाएक गिर पड़ता है। आनन्दीबाई झपटकर उसका सिर गोद में लेती है, पर अब उसकी आँखें फट चुकी हैं। आनन्दीबाई ज़ोर से चिल्लाकर रो पड़ती है। बाहर अँधेरा हो रहा है।]

यवनिका

भय का भूत

(एक ऐतिहासिक किंवदन्ती पर एकांकी)

मुख्य पात्र—

बाजीराव (द्वितीय)	::	::	पेशवा
राणोजी	::	::	गाँव का एक पटैल
मालोजी	::	::	राणोजी का पुत्र

उपक्रम

स्थान—महाराष्ट्र के एक गाँव के झोपड़े का एक कोठा

समय—सन्ध्या

[कोठे की दीवालें मैली हो गयी हैं; इधर-उधर कई स्थानों से छपाई झड़ जाने के कारण कुछ गढ़े दिखाई पड़ते हैं। पीछे की दीवाल में दो छोटी-छोटी खिड़कियाँ हैं, जिनसे बाहर के झोपड़ों का कुछ हिस्सा, और दूर पर नदी के प्रवाह का कुछ भाग, दिखायी देता है। छत पर बाँसों का पटाव है और उसकी छपाई भी इधर-उधर से गिर गयी है। ज़मीन पर एक मैली और यत्र-तत्र फटी हुई, जाजम बिछी हुई है। जाजम पर कुछ ग्राम-निवासी बैठे हुए हैं। इन्हीं में राणोजी और मालोजी भी हैं। राणोजी की अवस्था है लगभग ४४ वर्ष की और मालोजी की करीब २५ वर्ष की। सब की वेश-भूषा महाराष्ट्र के किसानों के सदृश है। राणोजी और मालोजी वस्त्रों के कारण कुछ सम्पन्न दिख पड़ते हैं।]

मालोजी

तो श्रीमन्त सरकार कल प्रातःकाल यहाँ पहुँच ही जायँगे?

एक किसान

अब इसमें सन्देह की जगह नहीं है।

मालोजी

हमारे यहाँ भी स्वागत और सेवा-सुश्रूषा का सारा प्रबन्ध है।

राणोजी

(आश्चर्य से मालोजी की ओर देखते हुए) सारा प्रबन्ध है! क्या प्रबन्ध है, मालो? घी, शक्कर, तेल, तो दूर रहे, एक दाना चावल और एक मुट्ठी आटा भी नहीं है, मिर्च, मसाला, नमक तक नहीं।

मालोजी

इनकी आवश्यकता ही न पड़ेगी, पिताजी।

राणोजी

(और भी आश्चर्य से) इनकी आवश्यकता ही न पड़ेगी? क्यों, क्या महाभारत की द्रौपदी के सदृश हमें भी कोई ऐसी थाली मिल गयी है, जिससे जितना भोजन हम चाहेंगे, उतना निकलता आयगा?

मालोजी

नहीं, वैसी थाली तो नहीं मिली है, पर......पर...... **(चुप हो जाता है।)**

राणोजी

पर क्या?

मालोजी

पिताजी, कुछ बातें ऐसी हैं जो कही नहीं जा सकती, केवल की जा सकती हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि श्रीमन्त सरकार के स्वागत और सेवा-सुश्रूषा में कोई त्रुटि न रहेगी।

राणोजी

पर सेवा-सुश्रूषा बिना खाद्य-पदार्थों के होगी कैसे? सुना नहीं, भागते हुए वे जिन-जिन गाँवों में ठहरते-ठहरते इधर आ रहे हैं उन-उन गाँवों का वर्ष भर का सारा सामान—घी, शक्कर, तेल, चावल,

गेहूँ उनकी एक दिन की ख़ातिर-तसल्ली में ख़र्च हो गया है। एक तो यह गाँव छोटा और फिर जब-जब मैंने गाँव से सामान इकट्ठा करने को कहा तब-तब तूने यही कहा कि जल्दी क्या है, इसलिए हम कुछ इकट्ठा भी न कर सके। कल श्रीमन्त सरकार पहुँच रहे हैं, रात भर में हम क्या कर लेंगे ?

मालोजी

पिताजी, जिन चीज़ों के बनने और तैयार होने में देर लगती है वे सब मौजूद हैं। देखिए, कुम्हार ने बड़े-बड़े बर्तन तैयार कर दिये, जिनमें भोज-सामग्री बनायी जायगी। लकड़ी कटकर सूख ही गयी, जो भोजन बनाने में जलायी जायगी।

एक किसान

पर, मालोजी, इन बर्तनों में जो चीज़ें बनायी जायँगी वे कहाँ है ?

दूसरा किसान

हाँ, लकड़ी जलाकर सिझाया क्या जायगा ?

मालोजी

इसकी आप लोग चिन्ता न किजिए। मुझे उन सब चीज़ों की ज़रूरत ही नहीं है।

राणोजी

(क्रोध से) तुझे उन सब चीज़ों की ज़रूरत ही नहीं है। तू कैसी बात करता है रे ?

मालोजी

देखिए, पिताजी, या तो मेरे प्रबन्ध पर आप भरोसा रखिए, और श्रीमन्त सरकार के स्वागत के सिवा, जो आपको और गाँव के पंचों को करना है, बाकी का काम मुझ पर छोड़

दीजिए, या फिर आप ही भोजन आदि की व्यवस्था भी कर लीजिए।

राणोजी

अब रात भर में मैं क्या व्यवस्था करूँ ?

मालोजी

तब मेरा भरोसा रखिए।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

एक किसान

(कुछ देर बाद) पर मालोजी बिना सामान के तुम भोजन की व्यवस्था करोगे कैसे ?

मालोजी

(कुछ देर सोचने के पश्चात्) तो आप लोग बिना बताये मानेंगे नहीं।

कुछ व्यक्ति

(एक साथ) हाँ, हाँ बताओ......बताओ......हमें।

मालोजी

देखिए, मैंने एक मंत्र सिद्ध किया है।

कुछ व्यक्ति

(एक साथ आश्चर्य से) मंत्र !

मालोजी

हाँ, मंत्र।

राणोजी

(आश्चर्य से) कैसा मंत्र ?

मालोजी

उस मंत्र के प्रभाव से दाल, चावल, आटा, घी, शक्कर,

तेल, मिर्च, मसाला जो चाहिए वह तत्काल उत्पन्न किया जा सकता है।

एक किसान

(अत्यधिक आश्चर्य से) ऐसा !

दूसरा किसान

(अत्यधिक आश्चर्य से) यह सब सामान मंत्र से उत्पन्न किया जा सकता है ?

तीसरा किसान

(उसी प्रकार आश्चर्य से) घी, शक्कर, तेल, चावल, दाल, आटा, मिर्च, मसाला मंत्र से बन जाता है ?

मालोजी

कल देख लेना। आप लोगों का एक ही काम है। आग जलाकर, बर्तनों में पानी भरकर चूल्हों पर चढ़ा दीजिए। मैं मंत्र पढ़कर उन बर्तनों पर अक्षत छोड़ूँगा। उस पानी के भीतर चावल, दाल, शाक इत्यादि सब पैदा हो जायेंगे, हिसाब से किसी में मसाले मिल जायँगे, बघार लग जायगा, किसी में शक्कर मिल जायगी और ऐसा स्वादिष्ट भोजन बनेगा, जैसा श्रीमन्त सरकार ने इस भाग-दौड़ में तो क्या पूना और सतारा में भी न खाया होगा।

[सब लोग आश्चर्य से भौचक्के होकर मालोजी की ओर देखते हैं।]

राणोजी

(कुछ देर पश्चात्) बेटा, तू हँसी तो नहीं कर रहा है ?

मालोजी

इसका प्रमाण आपको कल मिल जायगा, पिताजी।

[कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

राणोजी

(कुछ देर बाद) पर कल यदि तेरे मंत्र के प्रभाव से कुछ नहीं हुआ तो ?

मालोजी

तो फिर आप लोग सारी व्यवस्था कर लीजिए न ?

राणोजी

(झुँझलाकर) पर रात भर में हम लोग अब क्या करें ?

मालोजी

तो मुझ पर छोड़ दीजिए ।

[फिर कुछ देर निस्तब्धता ।]

राणोजी

(कुछ देर पश्चात्, सोचते हुए) अच्छा, सुन, इस मंत्र द्वारा तू जो वस्तुएँ कल उत्पन्न करेगा, वह आज ही कर दे ।

मालोजी

यह नहीं हो सकता, पिताजी, वह मंत्र तत्काल फल देता है, पहले से नहीं, और फिर आप तो मंत्र की परीक्षा लेना चाहते हैं ।

एक किसान

हाँ, हाँ, मंत्र की परीक्षा नहीं लेनी चाहिए, इससे तो न जाने कितने अनर्थ हो सकते हैं ।

[फिर कुछ देर निस्तब्धता ।]

मालोजी

(कुछ देर पश्चात्) मैंने मंत्र की सिद्धि देख ली है, पिताजी, आप लोग भरोसा रखें और निश्चिन्त रहें ।

[फिर निस्तब्धता ।]

राणोजी

(कुछ देर पश्चात्) पर, बेटा, तूने आज तक मुझे इस मंत्र के सम्बन्ध में कभी नहीं कहा।

मालोजी

आज भी न कहता, पिताजी, पर आप लोग पीछे ही पड़ गये। मैंने कहा न कुछ बातें ऐसी हैं, जो कही नहीं जा सकती, केवल की जा सकती हैं। मंत्र तंत्र की सिद्धि भी ऐसी ही बात है। अवसर पर ही यह सिद्धि दिखायी जा सकती है। आप देखेंगे कल क्या होता है।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

एक किसान

अच्छा, भाई, अब इन्हीं पर सब छोड़ दो।

दूसरा किसान

और हो ही क्या सकता है?

तीसरा किसान

हाँ, रात भर में हम क्या कर सकते हैं?

चौथा किसान

नहीं-नहीं, इस प्रकार लाचार होकर नहीं, श्रद्धा से मंत्र पर विश्वास रखकर इन पर सब छोड़ो। अरे, भाई! मंत्र सिद्ध हो जायँ तो क्या नहीं कर सकते। कमरूदेश का वृत्तान्त नहीं सुना, वहाँ मंत्र से मनुष्य को बकरा, और बकरा ही नहीं, मक्खी बना देते थे। और भी न जाने क्या-क्या करते थे। घी, शक्कर, तेल, आटा, दाल, चावल और मिर्च मसाला ही नहीं, मंत्र से तो चाँदी, सोना, जवाहर उत्पन्न किये जा सकते हैं। विश्वामित्र ने योग की सिद्धि से नया लोक ही बना दिया था।

मालोजी

आप लोग निश्चिन्त होकर, खूब उत्साह से, श्रीमन्त सरकार का स्वागत कीजिए। आग जलाकर जल भर-भरकर बर्तन चूल्हों पर चढ़ा दीजिए। पिताजी गाँव के सरपंच हैं, वे चूल्हो के पास जाकर एक बर्तन से प्रार्थना करे कि अमुक बर्तन में मीठा-भात बने, अमुक में आलू-भात, अमुक में हलुवा, अमुक में दाल, अमुक में कढ़ी, अमुक मे शाक। वे कहते जायँगे, मैं मंत्र पढ़-पढ़-कर अक्षत छोड़ता जाऊँगा। जब तक श्रीमन्त सरकार अपने साथियों के साथ नदी-तट पर स्नान, सध्या, पूजा मे निवृत होगे तब तक मध्याह्न आ जायगा और ठीक मध्याह्न के समय भोजन तैयार हो जायगा। पेशवा खायँगे कारबारी खायँगे, उनके सब साथी, फौज-फाटा खायगा और फिर हमारा सारा गाँव खायगा। ऐसा भोजन होगा......ऐसा भोजन जैसा न उन्होने कभी खाया होगा, न हमने।

[सब लोगों के मुँह में पानी आ जाता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

एक किसान

(कुछ देर पश्चात्) भाइयो, यह बड़े सौभाग्य की बात है कि हमारे गाँव में एक ऐसा सिद्ध पुरुष हो गया।

कुछ व्यक्ति

(एक साथ) हाँ......हाँ......हाँ......हाँ।

[कुछ लोग के हाथों से मालोजी के चरण छूते हैं, कुछ मस्तक भूमि पर टिका उसे प्रणाम करते हैं।]

यवनिका

पहला दृश्य

स्थान—महाराष्ट्र के उसी गाँव का नदी-तट

समय—प्रातःकाल

[दूर पर नदी का प्रवाह दृष्टिगोचर होता है। उदय होते हुए सूर्य की किरणें नदी के नीर को रँग दे रही है। इस ओर सामने के मैदान में एक ओर राणोजी और ग्रामनिवासी दिख पड़ते हैं और दूसरी तरफ़ बाजीराव (द्वितीय) अपने अनेक साथियों के संग। बाजीराव युवक है। मुख, शरीर, वेश-भूषा उसके ऐतिहासिक चित्र के सदृश। उसके साथी भिन्न-भिन्न अवस्था और भिन्न-भिन्न स्वरूप के हैं, पर वेश-भूषा सब की एक दूसरे से मिलती हुई है—मराठी पगड़ी, अँगरखा, चौड़ी किनार की धोती और चौड़ी किनार का गले में दुपट्टा। राणोजी आदि सिर पृथ्वी पर टेक-टेककर बाजीराव इत्यादि का स्वागत कर रहे हैं।]

लघु-यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—नदी-तट का दूसरा भाग

समय—प्रातःकाल

[दूर पर नदी का प्रवाह दृष्टिगोचर होता है। इस ओर सामने के मैदान में अनेक चूल्हे जल रहे हैं। इन चूल्हों पर मिट्टी के बड़े-बड़े मटके चढ़े हुए हैं। मटकों पर मिट्टी के ही ढक्कन हैं। राणोजी और मालोजी चूल्हों की ओर मुख किये हुए खड़े हैं। उनके पीछे अनेक देहाती हैं। मालोजी के हाथ में एक मिट्टी के सकोरे में अक्षत हैं।]

मालोजी

हाँ, पिताजी, अन्न देवता को श्रद्धा और भक्तिपूर्वक नमस्कार कीजिए।

[राणोजी अत्यधिक श्रद्धा से पृथ्वी पर मस्तक टिका नमन करता है। उसके साथ ही बाकी के देहाती भी इसी प्रकार नमन करते हैं।]

मालोजी

अब आप प्रत्येक पात्र को कहिए कि आप उससे क्या प्राप्त करना चाहते हैं।

राणोजी

(पहले मटके को हाथ जोड़कर) केशरी-भात।

[मालोजी सकोरे से थोड़े से अक्षत उठा आँख बन्दकर कुछ बोलता है। उसकी आवाज़ सुनायी नहीं पड़ती, केवल ओठ हिलते हैं। सब लोग ध्यान से मालोजी की ओर देखते हैं। कुछ ही सेकिण्ड में वह आँख खोलकर अक्षत उस मटके पर फेंकता है। अब राणोजी दूसरे मटके को हाथ जोड़कर 'आलू-भात' कहता है। मालोजी उसी प्रकार अक्षत ले, आँख बन्दकर, कुछ कह, फिर आँख खोल, उस मटके पर भी अक्षत फेंकता है। इसी प्रकार 'हलवा', 'दाल', 'कढ़ी', भिन्न-भिन्न प्रकार के शाकों का नाम क्रमशः प्रत्येक मटके के सामने हाथ जोड़-जोड़कर राणोजी लेता जाता है और मालोजी उसी प्रकार अक्षत फेंकता जाता है। बाकी के लोग श्रद्धा और कुछ आश्चर्य से इस दृश्य को देखते हैं।]

लघु-यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—नदी-तट का तीसरा भाग

समय—प्रातःकाल

[निकट ही नदी का प्रवाह दृष्टिगोचर होता है। इस ओर के तट पर पेशवा और उनके अनेक साथी आसनों पर सन्ध्या-वन्दन कर रहे हैं। नेपथ्य में एकाएक दूर पर बन्दूकों का शब्द सुन पड़ता है। सन्ध्या करनेवालों में कुछ घबड़ाहट दीख पड़ती है। नेपथ्य में दूर पर सुन पड़ता है—'अंगरेज !' 'अंगरेज सेना !' अब तो सन्ध्या-वन्दन करनेवालों में खलबली मच जाती है। पेशवा आसन पर से इस प्रकार उचकता है मानो हरिणी का बच्चा हो। उसकी ठोकर से सन्ध्या के पात्र उलट पड़ते हैं। सब लोग भागते हैं। राणोजी और कुछ देहातियों का शीघ्रता से प्रवेश।]

राणोजी

(पेशवा की ओर आते हुए जल्दी-जल्दी) भोजन......भोजन तो श्रीमन्त सरकार......

[पेशवा उसकी बात ही नहीं सुनता। सब भागते हैं। नेपथ्य में फिर कुछ नजदीक बन्दूकों का शब्द और 'अंगरेज सेना !' अंगरेज सेना !' सुन पड़ता है।]

यवनिका

उपसंहार

स्थान—वही झोपड़े का कोठा जो उपक्रम में था

समय—मध्याह्न

[दृश्य वैसा ही है जैसा उपक्रम में था; इतना ही अन्तर है कि कोठे में बहुत-सा सामान रखा हुआ है—कपड़े, सोने, चाँदी, ताँबे, पीतल के बर्तन; और भी न जाने क्या-क्या। राणोजी, मालोजी और देहाती बैठे हुए हैं।]

राणोजी

आख़िर अंग्रेज़-सेना न आयी, और व्यर्थ ही श्रीमन्त सरकार को भूखे-प्यासे भागना पड़ा।

एक किसान

आपने तो उन्हें रोकने का प्रयत्न भी किया।

दूसरा किसान

पर उस समय कोई किसी की सुनता था!

तीसरा किसान

मुझे तो श्रीमन्त सरकार की दौड़ देखकर हिरन याद आता था हिरन।

चौथा किसान

उसका कारण है, भाई।

तीसरा किसान

क्या ?

चौथा किसान

उन्हें बचपन में हिरनी का दूध पिलाया गया है।

तीसरा किसान

हिरनी का दूध !

अनेक किसान

हाँ हाँ, यह सच बात है......सच बात है......

पाँचवाँ किसान

इसीलिए वे बन्दूक के शब्द से भी इतने चौंकते हैं।

तीसरा किसान

पर हिरनी का दूध पिलाया क्यों गया ?

चौथा किसान

इसलिए कि वे हिरन के सदृश फुर्तीले हो जायँ। हो भी गए वे फुर्तीले, पर साथ ही डरपोक भी और ठीक हिरन के सदृश डरपोक।

मालोजी

बाजीराव का नाम धारण करने से कोई बाजीराव हो सकता है ? वे थे महाराष्ट्र के भूषण और ये हैं......

राणोजी

(बीच ही में) चुप......चुप, मालो, हमारे तो मालिक हैं।

[कुछ देर निस्तब्धता]

एक किसान

और सामान ये लोग कितना छोड़कर भागे !

दूसरा किसान

हाँ, हज़ारों का ही।

[फिर कुछ निस्तब्धता।]

एक किसान

अच्छा तो मध्याह्न तो हो गया, भोजन तैयार होगा।

दूसरा किसान

हाँ, हम ही लोग चलकर उसे समाप्त करें।

[दो किसानों का शीघ्रता से प्रवेश।]

आगन्तुक में से एक

अरे! उन मटकों में तो कुछ भी नहीं बना; केवल पानी खौल रहा है।

एक किसान

(आश्चर्य से) कुछ भी नहीं बना?

दूसरा आगन्तुक

हाँ, मध्याह्न होते ही हमने मटके देखे, किसी में कुछ नहीं है।

मालोजी

(अत्यन्त गम्भीरता से) जब पेशवा ही चले गये तब मेरा मंत्र किसके लिए व्यंजन बनायगा! अभी भी आप उन्हें ले आइए, देखिए; सब पकवान बन जाते हैं, या नहीं।

[सब लोग गम्भीरता से मालोजी की ओर देखते हैं, पर अब वह खिल-खिलाकर हँस पड़ता है। सब लोग आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगते हैं।]

मालोजी

(हँसते-हँसते) भाइयो, एक बात तो हो गई न। मंत्र के बल से हमें श्रीमन्त सरकार की सेवा-सुश्रूसा के लिए उस सामान की

ज़रूरत ही नहीं पड़ी। इस मंत्र का नाम है 'भय का भूत' और यह ऐसा भूत है जिसका कोई अस्तित्व नहीं, पर इतने पर भी यह अस्तित्व रखनेवालों को बिना अस्तित्व का बना देता है। **(कुछ रुककर)** हाँ, जहाँ तक हमारे खाने से सम्बन्ध है वहाँ तक मंत्र के बल से **(पड़े हुए सामान की ओर संकेत कर)** हमें जो यह सामान मिला है उससे हम तो अब पूरे वर्ष भर केशरी और आलू-भात तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के पदार्थ खायँगे।

यवनिका

समाप्त

व्यवहार

(सामाजिक एकांकी)

मुख्य पात्र —

रघुराजसिंह	::	::	::	एक ज़मींदार
नर्मदाशंकर	::			रघुराजसिंह के स्टेट का मैनेजर
चूरामन	::	::	::	एक किसान
क्रान्तिचन्द्र	::	::	::	चूरामन का पुत्र

पहला दृश्य

स्थान—नगर में रघुराजसिंह के महल की एक बालकनी

समय—प्रातःकाल

[एक विशाल बालकनी का जो हिस्सा दिखाई देता है वह सुन्दरता से बना और सजा हुआ है। उसके खंभे संगमरमर के हैं और रेलिंग बीड़ की रँगी हुई। फर्श आर्टीफिशल मार्बल का बना है, जिसमें रंग-बिरंगे बेल-बूटे हैं। छत पर चूने की नक्काशी है और उससे बिजली की कई बत्तियाँ भूल रही हैं, जिनके शेड बेशक़ीमती हैं। एक बिजली का सीलिंग फैन भी लटक रहा है। पीछे की रेलिंग के निकट ही वृक्षों के ऊपरी भाग दिख पड़ते हैं, जिससे जान पड़ता है कि बालकनी तीसरे या चौथे मंज़िल पर है। बालकनी में लकड़ी का एक फैन्सी झूला, सोफा-सेट, टेबिलें आदि सुन्दरता से सजी हैं। कुछ चिनी मिट्टी के गमले भी रखे हैं, जो भिन्न-भिन्न प्रकार के पौधों से भरे हुए हैं। बालकनी की बनावट और सजावट के देखने से वह किसी अत्यन्त संपन्न व्यक्ति के महल का एक भाग जान पड़ती है। रघुराजसिंह बालकमी के एक कोने में खड़ा हुआ एक छोटी सी फैन्सी दूर्बीन से पीछे के दरख़्तों के परे की कोई वस्तु देख रहा है। रघुराजसिंह करीब २५ वर्ष की अवस्था का, गौर-वर्ण, ऊँचा-पूरा, किन्तु दुबला सुन्दर मनुष्य है। वह एक ढीली बाँहों का पतला-सा कुरता और चूड़ीदार पाजामा पहने

हुए है। उसका सिर खुला हुआ, जिस पर लंबे बाल लहरा रहे हैं। छोटी-छोटी मूँछें हैं और आँखों पर मोटे फ्रेम का चश्मा। उसके नज़दीक ही नर्मदाशंकर खड़ा हुआ है। नर्मदाशंकर की उम्र लगभग ६५ वर्ष की है। वह साँवले रंग, ठिंगने कद का मोटा आदमी है। सिर पर बड़ा-सा साफ़ा बाँधे है और शरीर पर शेर-वानी तथा पाजामा पहने है। उसके बड़े से मुख में उसकी छोटी-छोटी आँखें और बड़ी-बड़ी सफ़ेद मूँछें एक ख़ास स्थान रखती हैं।]

रघुराजसिंह

(दुर्बीन से देखते-देखते) भोज की ठीक तैयारी हो रही है, मैनेजर साहब, बहन के विवाह में किसानों की यह दावत मैं विवाह का सबसे बड़ा काम मानता हूँ। (कुछ रुककर) कुल मिलाकर कितने किसान आवेंगे?

नर्मदाशंकर

पच्चीस हज़ार से कम नहीं, राजा साहब, आपने उन्हें मय बाल-बच्चों के आने का निमंत्रण जो भेजा है।

रघुराजसिंह

(दुर्बीन से देखते-देखते ही) क्यों, पहले की शादियों में किसानों को कुटुम्ब-सहित निमंत्रित नहीं किया जाता था!

नर्मदाशंकर

कभी नहीं, सिर्फ़ मर्द बुलाये जाते थे, वे भी चुने हुए घरों के, और घर पीछे एक आदमी।

रघुराजसिंह

(दुर्बीन से देखते-देखते ही) पर यह ग़लत बात थी, मैनेजर साहब, सिर्फ़ मर्दों को, और वह भी चुने हुए घरों के, तथा

घर पीछे एक ही आदमी को बुलाने का क्या अर्थ है ?

नर्मदाशंकर

अर्थ ! अर्थ तो सभी पुरानी बातों का है, राजा साहब। (कुछ रुककर) हाँ, एक कठिनाई ज़रूर है।

रघुराजसिंह

(दुर्बीन आँखों के सामने से हटाकर, नर्मदाशंकर की ओर देख) कैसी कठिनाई, मैनेजर साहब ?

नर्मदाशंकर

(गला साफ़कर कुछ भर्राये हुए स्वर में) आप माफ़ करें तो कहूँ।

रघुराजसिंह

आप मेरे पिताजी के समय से काम कर रहे हैं, शायद चालीस वर्ष आपको काम करते-करते बीत गये। मैं आपके सामने पैदा हुआ। पिताजी की मृत्यु के बाद मेरी नाबालग़ी में आपने ही कुल काम किया, आज भी आप ही मैनेजर हैं, आपको मैं अपना बुजुर्ग मानता हूँ; आपको कोई बात कहने के पहले माफ़ी माँगने की ज़रूरत है ?

नर्मदाशंकर

मैं आपकी कृपा का हाल जानता हूँ, राजा साहब, इसीलिए आज कुछ कहने की हिम्मत कर रहा हूँ। जो-जो बातें पहले होती थीं उनके कारण ही (बालकनी की ओर इशारा कर) ये महल महलात, यह वैभव और ऐश्वर्य नज़र आता है। विवाह में घर पीछे एक किसान और वह भी चुने हुए घरों के किसानों को, निमंत्रण देने का सवाल नहीं है, प्रश्न है कार्य की सारी पद्धति का।

रघुराजसिंह

अच्छा, तो जिस पद्धति से मैं काम कर रहा हूँ वह आप मुनासिब नहीं समझते ?

नर्मदाशंकर

(सहमे हुए स्वर में) बात तो ऐसी ही है और समय-समय पर मैं अपनी राय का संकेत भी करता आया हूँ।

रघुराजसिंह

(कुछ याद करते हुए) हाँ, मुझे याद आ रहा है। काम सँभालते ही जब मैंने किसानों पर का सारा कर्ज़ माफ़ किया तब वह बात भी आपको पसन्द नहीं आयी थी।

नर्मदाशंकर

हाँ, राजा साहब, मुझे तो पसन्द नहीं आयी थी।

रघुराजसिंह

(विचारते हुए) परन्तु आख़िर उस कर्ज़ में से कितना कर्ज़ वसूल होता ?

नर्मदाशंकर

सवाल कर्ज़ की वसूली का नहीं है।

रघुराजसिंह

तब ?

नर्मदाशंकर

किसानों पर उस कर्ज़ के कारण दबाव था, वह चला गया।

रघुराजसिंह

ओह ! तो अपना कोई फ़ायदा न होने पर भी किसानों को कुचलकर रखना ही पुरानी पद्धति का अर्थ है।

नर्मदाशंकर

नहीं, राजा साहब, ऐसी बात नहीं है।

रघुराजसिंह

तब ?

नर्मदाशंकर

बिना किसानों पर दबाव रखे हम ज़मींदारी से कोई लाभ उठा ही नहीं सकते।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुराजसिंह

(गंभीरता से विचारते हुए) और जिन ज़मीनों पर ज़्यादा लगान था, मेरा उनका लगान घटाना भी आपको पसन्द न आया होगा ?

नर्मदाशंकर

किसी ज़मीन पर ज़्यादा लगान था ही नहीं, राजा साहब।

रघुराजसिंह

किसी ज़मीन पर ज़्यादा लगान नहीं था ?

नर्मदाशंकर

किसी पर भी नहीं।

रघुराजसिंह

तो जो किसान इतना रोते और बिलखते थे, वह सब उनका ढोंग था ?

नर्मदाशंकर

बिलकुल ढोंग, राजा साहब।

रघुराजसिंह

इतने मनुष्य झूठे आँसू बहाते थे ?

नर्मदाशंकर

आप इन किसानों से अभी वाकिफ़ नहीं हैं, राजा साहब, ये क्या-क्या कर सकते हैं, आप जानते नहीं। आँखों में दवा डाल-कर ये आँसू बहा सकते हैं।

[कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

रघुराजसिंह

(विचारते हुए) और जिन ग़रीब किसानो को मैंने बिना कोई नज़राना लिये ज़मीनें दीं, वह भी ग़लती की?

नर्मदाशंकर

वे इतने ग़रीब थे ही नहीं, राजा साहब, कि नज़राना न दे सकें।

रघुराजसिंह

पर कितने किसानो ने उनकी सिफ़ारिश की थी!

नर्मदाशंकर

चोर-चोर मौसेरे भाई, राजा साहब।

[फिर कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुराजसिंह

और आज विवाह के उपलक्ष में मैंने कुटुम्ब-सहित किसानों को जो भोज दिया, इसमें क्या ग़लती है?

नर्मदाशंकर

किसानों का भोज ख़र्च का नहीं, आमदनी का कारण होता था, वह अब ख़र्च का कारण हो जायगा।

रघुराजसिंह

अर्थात्?

नर्मदाशंकर

 राजा साहब, इस निमंत्रण में सिर्फ़ संपन्न किसानों को बुलाया

जाता था। घर पीछे एक आदमी को निमंत्रण दिया जाता था। एक मिठाई, एक नमकीन, एक साग, एक रायता और पूड़ी-कचौड़ी उन्हें खिला दी जाती थीं। फ़ी आदमी मुश्किल से चार आना खाता था। खानेवाले व्यवहार करते थे—कोई एक रुपया, कोई दो, कोई चार, कोई पाँच, कोई सात, कोई ग्यारह और कोई इक्कीस भी। आज के भोज में न जाने कितनी तरह की मिठाइयाँ, नमकीन, तरकारियाँ, रायते, मुरब्बे, अचार, चटनियाँ और भी न जाने क्या-क्या, इन्हें खिलाया जायगा। संपन्न कम और दरिद्री अधिक आएँगे, फिर उनका पूरा का पूरा कुटुम्ब खायगा। व्यवहार देनेवाले कितने होंगे ?

रघुराजसिंह

(आश्चर्य से) व्यवहार ! आप इनसे व्यवहार लेंगे ?

नर्मदाशंकर

(और भी आश्चर्य से) क्यों ? व्यवहार नहीं लिया जायगा ?

रघुराजसिंह

कभी नहीं।

[नर्मदाशंकर आश्चर्य से स्तंभित-सा होकर रघुराजसिंह की तरफ़ देखता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

नर्मदाशंकर

(धीरे-धीरे अत्यन्त भर्राये हुए स्वर में) लेकिन......लेकिन, राजा साहब, व्यवहार......व्यवहार न लेना तो उन किसानों......किसानों का भी अपमान......अपमान करना......

लघु-यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—गाँव के एक मकान का कोठा

समय—प्रातःकाल

[साधारण लंबाई-चौड़ाई का देहाती मकान का एक कोठा है। तीन ओर की दिखनेवाली दीवालों पर गारे की छपाई है, जो छुई मिट्टी से पुती है। कहीं-कहीं दीवालें मैली हो गयी हैं। पीछे की दीवाल में ऊपर की तरफ़ दो छोटी-छोटी खिड़कियाँ हैं, जिनमें लकड़ी के भद्दे से जंगले हैं। खिड़कियाँ ऊपर होने के कारण खिड़कियों के बाहर क्या है, यह दिखायी नहीं देता। दाहिनी ओर की दीवाल में एक छोटा-सा दरवाज़ा है, जिसकी चौखट और किवाड़ देहाती ढंग के बने हैं। दरवाज़ा बन्द है। छत पर बाँसों का पटाव है, जिस पर गारा छपा हुआ है और छुई पुती हुई है। इधर-उधर से गारे की छपाई झड़ जाने के कारण बाँस दिखायी देते हैं। ज़मीन गोबर से लिपी हुई है। तीन तरफ़ ख़ाली ज़मीन छोड़कर, बीचों-बीच पीछे की दीवाल से सटाकर एक लाल रंग की जाजम बिछी हुई है। जाजम इधर-उधर मैली हो गयी है और यत्र-तत्र फट भी गयी है। जाजम पर कई किसान बैठे हुए हैं। इनकी अवस्थाएँ भिन्न-भिन्न हैं और स्वरूप भी अलग, अलग लेकिन कपड़े सबके प्रायः एक-से हैं। इनके कपड़ों के कारण देखनेवालों को इनके किसान होने में कोई शक नहीं रह जाता। इस समुदाय

मे एक ही व्यक्ति ऐसा है जो किसान नहीं जान पड़ता । इसका नाम है क्रान्तिचंद्र । क्रान्तिचंद्र की अवस्था २२,२३ वर्ष से ज़्यादा नहीं है । वह साँवले रंग का, ऊँचा-पूरा बलिस्ट व्यक्ति है । उसकी बहुत बड़ी बड़ी आँखें और कुछ सिकुड़े से ओठ उसके मुख में एक ख़ास स्थान रखते हैं । वह ख़ाकी रंग का कमीज़ और निकर पहने है । सिर खुला हुआ है, जिस पर लम्बे सँवारे हुए बाल हैं । क्रान्तिचन्द्र के पास ही उसका पिता चूरामन बैठा है । चूरामन की उम्र करीब ६० वर्ष की है । उसका रंग भी साँवला है । सारा शरीर दुबला और मुख पिचका हुआ जिसमें उसकी घुसी हुई आँखें उसके मुख को अत्यधिक करुण बना रही हैं । उसकी और अन्य किसानों की वेश-भूषा में कोई फर्क नहीं है; इतना ही अन्तर है कि वह कानों में सोने की मुरकियाँ पहने हुए है । क्रान्तिचन्द्र अत्यन्त क्रोध भरी मुद्रा और अत्यधिक क्रूर दृष्टि से, जो उसकी बड़ी-बड़ी आँखों के कारण और ज़्यादा क्रूर हो गयी है, चूरामन की तरफ़ देख रहा है और चूरामन ज़मीन की ओर । कभी-कभी वह क्रान्तिचन्द्र की तरफ़ दृष्टि उठाता है, पर ज्योंही वह देखता है कि क्रान्तिचन्द्र उसकी ओर देख रहा है, त्योंही वह अपनी दृष्टि फिर नीचे कर लेता है । बाकी के किसान कभी पिता और कभी पुत्र की तरफ़ देखते हैं । कोठे में एक विचित्र प्रकार का सन्नाटा छाया हुआ है ।]

क्रान्तिचन्द्र

(धीरे-धीरे) तो निमंत्रण के ठीक समय तक हम लोग इसी प्रकार मौन बैठे रहेंगे और बाहर बैठे हुए सब लोग हमारे निर्णय की प्रतीक्षा करते रहेंगे ?

[कोई कुछ नहीं बोलता । फिर निस्तब्धता ।]

क्रान्तिचन्द्र

(कुछ देर बाद, उठते हुए) अच्छी बात है, आप लोग इसी प्रकार बैठे रहें, मुझे जो कुछ करना ठीक जान पड़ता है, मैं जाकर करता हूँ। (खड़ा होता है।)

चूरामन

बैठ, बैठ, रेवापरसाद ! सुन तो।

क्रान्तिचन्द्र

(खड़े-खड़े ही, क्रोध से) मेरा नाम रेवाप्रसाद नहीं है, पिताजी, मैंने कई बार आपसे कह दिया, मैं न किसी का प्रसाद हूँ न किसी का दास।

चूरामन

(डरते-डरते) भूल गया, भूल गया, पर तू बैठ तो, किरान्ती-चन्दर।

क्रान्तिचन्द्र

(कुछ शान्ति से) पर बैठकर करूँ क्या ? यहाँ तो सभी ने मौन-व्रत धारण कर रखा है।

चूरामन

मउन बिरत की बात नहीं है, बेटा, तूने परसन ही ऐसा रखा है कि जवाब सरल काम थोड़ई है।

क्रान्तिचन्द्र

(बैठते हुए) मैंने ऐसा प्रश्न रखा है ? पिताजी, पिंजरे में बन्दी पक्षी के उड़ने के लिए यदि पिंजरे का द्वार खोल दिया जाय तो द्वार खोलनेवाला कोई समस्या खड़ी नहीं करता। अंध-कार में रहनेवाले व्यक्ति को यदि प्रकाश में ले आया जाय तो प्रकाश में लानेवाला कोई भूल नहीं करता।

[कोई कुछ नहीं बोलता । फिर निस्तब्धता ।]

क्रान्तिचन्द्र

(फिर उठते हुए) मैं देखता हूं, यहां इस प्रश्न का निर्णय न हो सकेगा । (खड़ा होता है ।)

एक किसान

तब कहां होगा, भैया ?

दूसरा किसान

हां, सब गावँन के पच तो हियां बइठे हैं । यहां निरनय न होई तो कहां होई ?

क्रान्तिचन्द्र

(खड़े-खड़े ही) दासता की श्रृंखलाओं मे, वर्षों नही नहीं युगों, नहीं नहीं पीढ़ियों तक, बँधे रहने के कारण पंचों में इस प्रश्न के निर्णय की सामर्थ्य नहीं रह गयी है ।

तीसरा किसान

तब निरनय कौन करेगा ?

क्रान्तिचन्द्र

बाहर खड़ी हुई किसान-जनता ।

चूरामन

बैठ, रेवा, बैठ तो...

क्रान्तिचन्द्र

(क्रोध से) फिर......फिर... ..रेवा, पिताजी......

चूरामन

अरे, भैया, बुढ़ा गया हूँ, भूल जाता हूँ रे ।

क्रान्तिचन्द्र

(कुछ शान्त होते हुए) पर भूल पर भूल और उस पर भी

भूल, भूलों की झड़ियों ने ही तो हमारी यह दशा कर दी है। मूल की बातों में भूल होना सबसे बड़ी भूल है।

चूरामन

अच्छा, तू बैठ तो।

[**क्रान्तिचन्द्र बैठ जाता है। फिर कोई कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।**]

क्रान्तिचन्द्र

(**कुछ देर बाद**) फिर सन्नाटा! आप लोगों को हो क्या गया है? एक छोटी सी बात के निर्णय में इस प्रकार का पशोपेश।

चूरामन

छोटी बात! यह छोटी बात है?

क्रान्तिचन्द्र

और क्या है? ज़मीदार के निमंत्रण में जाकर गन्दे घी की मिठाई, चोकर की पूड़ियाँ और सड़े साग खाना छोटी बात नहीं तो कोई बड़ी बात है? फिर यह सब भी किस अपमान से किया जाता है। मुझे अपने छुटपन के एक ऐसे ही निमंत्रण का स्मरण है। महल के फाटक से ही हमारा अपमान आरंभ हुआ था। सदर फाटक में तो हम लोग घुसने ही न पाये। एक पुराना टूटा-फूटा फाटक हमारे लिए खोला गया था। हरेक को प्रवेश के पहले अपने निमत्रण की टिकट दिखानी पड़ती थी। आपको निमंत्रण था, पिताजी, मुझे नहीं, इसलिए आपके कितने गिड़गिड़ाने और अनुनय-विनय करने पर मुझे घुसने दिया गया था। वह दृश्य आज भी अनेक बार दृष्टि के सामने घूम जाता है। हम लोगों को घुड़साल में खिलाया गया था, घुड़साल में। घोड़ों की लीद और मूत की दुर्गन्ध से नाक सड़ी जाती थी। उस दुर्गन्ध को

इतने वर्षों के पश्चात् भी मेरी नाक तो नहीं भूली है। फटी पत्तलों और फूटे सकोरों में हमें परसा गया था। परसगारी करनेवाले हमें इस प्रकार परसते थे, मानो हम कंगीर हों और वह भोजन करा हम पर महान् उपकार किया जा रहा हो। भोजन की सामग्री का स्वाद अभी भी मेरी जीभ नहीं भूली है—कह नहीं सकता, घी में मिठाई बनी थी या किसी गन्दे परनाले के पानी में, दही का रायता था या छुई मिट्टी का, साग था कदाचित् सप्ताहों का सड़ा हुआ और पूरियाँ आटे की तो नहीं थीं, लकड़ी के बुरादे की हो सकती हैं। ऐसे भोजन के पश्चात् हमारे ग़रीब भाइयों को जो खनाखन व्यवहार का रुपया देना पड़ा था, उसका शब्द अभी भी मेरे कानों में गूँज उठता है। पिताजी आप कहते हैं ऐसे निमंत्रण में न जाने का निर्णय छोटी बात नहीं है; बड़ी, बहुत बड़ी बात है! ओह!

चूरामन

बेटा, परिसन मान-अपमान और भोजन का नहीं है।

क्रान्तिचन्द्र

तब?

चूरामन

ज़मीदार का न्योता है, बेटा, ज़मीदार का।

क्रान्तिचन्द्र

ऐसा! तो जो आपको लूट रहा है, जो आपका ख़ून पी रहा है, उस लुटेरे उस डाकू के भय से आप निमंत्रण में जा रहे हैं?

चूरामन

(भयभीत स्वर में) बेटा...बेटा...कैसी...कैसी बातें कर

रहा है, क्या पागल हो गया है ? इसकूल और कलेज में जाकर क्या लड़के इस तरा से पगले हो जाते हैं ? भींतों के भी कान होते हैं, बेटा......थोड़ा......

क्रान्तिचन्द्र

(आश्चर्य से) सच्ची बात कहने में काहे का डर, पिताजी ! दूसरों के श्रम पर बिना कोई श्रम किये जो तरह-तरह के गुलछर्रे उड़ाते हैं, वे लुटेरे नहीं तो क्या हैं ? श्रम करनेवाले भूखे और नंगे रहते हैं और ये आरामतलब बिना कोई काम किये अलमस्त। ऐसे लोग ख़ून चूसनेवाले नहीं तो और क्या कहे जा सकते हैं ? स्कूल और कॉलेज यदि सच्ची वस्तुस्थिति दिखा दें तो क्या वे कोई अपराध करते हैं ? दीवालों के कान होते हैं ! पिताजी, मैं डरता नहीं हूँ, भय से अधिक बुरी वस्तु मैं संसार में और कोई नहीं मानता। ईंट-चूने, मिट्टी-गारे की दीवालो के नहीं, मनुष्यों के समूहो के सामने मैं ये सब बातें कहने, ऊँचे से ऊँचे स्वर में कहने के लिए तैयार हूँ, तैयार ही नहीं, पिताजी, मैंने कही हैं; स्वयं ज़मीदार के सम्मुख कहने, उसे लिखकर भेजने के लिए प्रस्तुत हूँ।

चूरामन

शिव, शिव ! शिव, शिव !

एक किसान

सब धान बाइस पसेरी नहीं होती। सब ज़मीदार एकइसे नहीं होते।

दूसरा किसान

फिर हमारे इन ज़मीदार ने तो काम हात में लेते ही हम पर न जाने कित्ते उपकार किये हैं।

तीसरा किसान

इस न्योते को ही देखो न ? पहले ब्याह-सादी में छाँट-छाँट कर, छुटे घरों के एक-एक आदमी को न्योता जाता था, अब पूरे के पूरे गाँवों को, न्योता हर किसान को, किसान के पूरे कुनबे को।

क्रान्तिचन्द्र

ठीक, जान पड़ता है, ज़मीदार आप सबकी आँखों में धूल डालने में सफल हो गया। यद्यपि मैं कॉलेज से हाल ही में आया हूँ, पर विद्यार्थी की हैसियत से यहाँ आता-जाता तो रहता ही था। ज़मीदार के काम सँभालने के पश्चात् उसके द्वारा जो उपकार हुए हैं उन सबका वृत्त मैं भली भाँति जानता हूँ, और सिद्ध कर सकता हूँ कि, उसकी जिन बातों को आप उपकार मानते हैं वे उपकार की न होकर यथार्थ में आपके अपकार की बातें हैं।

एक किसान

(व्यंग से) ऐसा !

क्रान्तिचन्द्र

जी हाँ। और जो कुछ मैं कहता हूँ उसकी सत्यता सिद्ध करने की सामर्थ्य भी रखता हूँ। उसकी पहली बात जिसे आप उपकार समझते हैं, यही है न कि उसने, आप पर जो कर्ज़ था उसे छोड़ दिया ?

एक किसान

हाँ। (दूसरों की ओर देखकर) क्यों, भइया ?

कुछ किसान

(एक साथ) हाँ...हाँ।

क्रान्तिचन्द्र

आप बता सकते हैं, इसमें से कितना कर्ज़ ऐसा था, जो

वसूल हो सकता ?

[कोई कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता]

क्रान्तिचन्द्र

जिस वर्ष कर्ज़ की यह छूट की गयी उस वर्ष गर्मियों की छुट्टी में मैंने अनेक गाँवों में जा-जाकर उन किसानों की स्थिति की जाँच की थी, जिनपर कर्ज़ छोड़ा गया था। आप सच मानिए, इन किसानों में से सौ में से निन्यानबे ऐसे थे, जिनके पास ज़मीदार के कर्ज़ का ब्याज चुकाते-चुकाते भोजन बनाने के टूटे-फूटे बर्तन तक न रहे थे। खेती का जो इक्का-दुक्का सामान था, कंकाल हुए बैल थे, सड़ा या पतला-सा बीज था, वह क़ानून के अनुसार कर्ज़ में नीलाम कराया नहीं जा सकता था। फिर ज़मीदार कर्ज़ वसूल कहाँ से करता ?

एक किसान

पर सौ में एक से तो वसूल कर लेता।

क्रान्तिचन्द्र

यही तो आप समझते नहीं। सौ में से एक से पुराना कर्ज़ वसूल करने की अपेक्षा, पुराना कर्ज़ छोड़, उन्हें नया कर्ज़ देकर उनसे ब्याज वसूल करना ज़मीदार के लिए कहीं अधिक लाभ-प्रद था।

[सब किसान एक दूसरे का मुख देखते हैं। फिर सब चूरामन की ओर देखते हैं। वह कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।]

क्रान्तिचन्द्र

कहिए, मैं ठीक कहता हूँ, या ग़लत ?

[फिर कोई कुछ नहीं बोलता। फिर निस्तब्धता]

क्रान्तिचन्द्र

(कुछ देर बाद) दूसरा उपकार, जो इस ज़मीदार का आप मानते होंगे, वह कदाचित् उसका कुछ ज़मीनों का लगान कम करना है ?

एक किसान

हाँ, हाँ, यह तो उनका बड़ा भारी काम है।

कुछ किसान

(एक साथ) हाँ......हाँ......हाँ......हाँ......

क्रान्तिचन्द्र

यहाँ भी आप लोग भूल में हैं।

कुछ किसान

(एक साथ) कैसे......कैसे......?

क्रान्तिचन्द्र

इस सम्बन्ध में भी मैंने जाँच कर ली है। जिनकी ज़मीनों पर लगान कम किया गया, उनमें से सौ में से निन्यानबे किसानों पर बक़ाया लगान की नालिशें की गयी थीं। ज़मीनों के अतिरिक्त उनके पास कुछ भी नहीं था। बेदख़लियाँ हो सकती थीं, परन्तु वे ज़मीनें इतनी बुरी दशा में थीं कि बेदख़ली के पश्चात् कोई उन्हें लेता ही नहीं। ज़मीदार घर में कितनी ज़मीन जोतता, अतः लगान कम करके उन्हीं किसानों के पास ज़मीन रहने देना ज़मीदार के लिए ज्यादा फायदेमन्द था।

[फिर सब किसान एक दूसरे का मुख देखने लगते हैं और फिर सब चूरामन की ओर देखते हैं। कोई कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।]

क्रान्तिचन्द्र

आप थोड़ा सा ध्यान देकर ज़मींदार की कार्रवाइयों को देखे तो उनका सच्चा रहस्य आपकी समझ में आ जाय।

[फिर कुछ देर निस्तब्धता।]

क्रान्तिचन्द्र

तीसरा काम जो इस ज़मींदार ने किया, वह है कुछ किसानों को बिना नज़राने के मुफ़्त में ज़मीनें देना। **(कुछ रुककर)** क्यों ?

कुछ किसान

(एक साथ) हाँ......हाँ......हाँ......हाँ......

क्रान्तिचन्द्र

मैं आपसे पूछता हूँ, यदि ज़मींदार यह न करता तो करता क्या ? क्या आप नहीं जानते कि उसकी हज़ारों एकड़ ज़मीन पड़ती पड़ी है। बिना नज़राने के ज़मीने उठा देने से भी उसकी आमदनी बढ़ी है या घटी ? मैंने इस सम्बन्ध में भी सारी बातों का पता लगाया है और इस काम में ज़मींदार की वार्षिक आय में कोई पच्चीस हज़ार रुपये की वृद्धि हुई है।

[सब लोग फिर एक दूसरे की ओर देखकर चूरामन की तरफ देखने लगते हैं। वह फिर कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।]

क्रान्तिचन्द्र

अब विवाह के इस निमंत्रण को ले लीजिए। आप समझते हैं कि छूँटे हुए किसानों को ही निमंत्रण न देकर, हर गाँव के हर किसान को निमंत्रण दे, ज़मींदार ने आप सब पर बड़ा प्रेम दर्शाया है। मैं कहता हूँ कि इस दुर्भिक्ष के समय आप पर

और विशेषकर ग़रीब किसानों पर, इससे बड़ा ज़ुल्म संभव नहीं था। इसके पिता केवल सम्पन्न किसानों को बुलाते थे। उनसे व्यवहार वसूल होता था। अब सभी बुलाये गये हैं; कुटुम्ब सहित। सबसे व्यवहार की वसूली होगी; एक-एक घर से नहीं, घर के प्रत्येक व्यक्ति से। चार आना खिलाकर चार रुपया वसूल किये जायँगे।

एक किसान

भाई, यह तो सच है।

कुछ किसान

(एक साथ) हाँ......हाँ......हाँ......हाँ......

[कुछ देर निस्तब्धता।]

कान्तिचन्द्र

ज़मीदार और किसान के हित एक दूसरे के ठीक विरुद्ध हैं। दोनों एक दूसरे का हित-साधन कर ही नहीं सकते। जो ज़मीदार इसकी डींग मारता है वह लुटेरा और डाकू ही नहीं, धोखेबाज़ भी है तथा धोखा देकर और अधिक लूटने और ख़ून चूसने का इच्छुक। हम किसान अधिक संख्या में हैं। जिधर अधिक संख्या होती है वहीं बल। हमने न सच्ची वस्तुस्थिति समझी है और न अपना बल पहचाना है। शत्रु को मित्र मान, उससे मित्र का-सा व्यवहार, सच्ची वस्तुस्थिति को न पहचानना नहीं तो और क्या है? बल रहते हुए भी अपने को निर्बल समझने से अधिक कौनसी भूल हो सकती है? ज़मीदार हमारा शत्रु है, सबसे बड़ा शत्रु। भक्षक और भक्ष का कैसा व्यवहार? उनके आपस में कैसा प्रेम? और अपना सच्चा स्वरूप पहचानकर, अपना बल जानकर, यदि हम सब एक होकर इस भोज में सम्मिलित

न हों तो ज़मीदार हमारा क्या कर सकता है ? **(कुछ रुककर, सबकी ओर एक बार दृष्टि घुमा)** मैं कहता हूँ इससे अच्छा अवसर मिल नहीं सकता, जब हम ज़मीदार को बता दें कि तुम और हम यथार्थ में मित्र नहीं, शत्रु हैं, तुम्हारा हमारा कोई व्यवहार नहीं, तुम्हारे हित और हमारे हित एक दूसरे के ठीक विपरीत हैं। अब उन्हें पहचान लिया है। अपने आपको भी हमने जान लिया है। हम अपने रास्ते चलेंगे, तुम अपने रास्ते चलो। तुम एक हो, हम करोड़ों। एक का सातों सुख भोगना, और करोड़ों का अन्न के लिए 'त्राहि-त्राहि' और 'पाहि-पाहि' करना, वस्त्रों के बिना नंगे घूमना, घरों के बिना वृक्षों के नीचे पड़े रहना, यह सदा संभव नहीं। तुमने वर्षों नहीं, युगों से हमें लूटा है हमारा ख़ून पीकर स्वयं लाल हुए हो, हम अब धोखा नहीं खा सकते। तुम्हारा नाश करके ही हम सुखी हो सकते हैं। यह सब स्वयं समझ लेने ही नहीं, पर उसे बता देने के पश्चात् ही हमारा कार्य ठीक दिशा में हो सकेगा, क्योंकि उस कार्य के मार्ग का प्रधान रोड़ा भय फिर हमारे सामने रह जायगा।

[क्रान्तिचन्द्र चुप होकर सब की तरफ़ देखता है। कोई कुछ नहीं बोलता। सब लोग चूरामन की ओर देखते हैं। चूरामन पृथ्वी की तरफ़। कुछ देर निस्तब्धता।]

क्रान्तिचन्द्र

(अत्यन्त क्रोध से खड़े होकर) जान पड़ता है आप पंचों का सच्ची वस्तुस्थिति समझ सकना, अपने बल को पहचान कर ठीक दिशा में चलना नहीं सम्भव रह गया है; परन्तु मैं जानता हूँ कि किसान-जनता की यह दशा नहीं है। आप थोड़े बहुत संपन्न हैं न, इस नाम मात्र की संपन्नता के कारण जीवन में पड़े हुए सुख

के छोटे-छोटे छींटे भी नहीं छोड़े जाते। इन सुखों के छींटों के सूख जाने का भय आपसे अपने भाइयों के गले पर भी छुरी चलवा रहा है। अपने भाइयो के ख़ून से तर खाने की सामग्री भी आप पंच खाने को तैयार हैं, परन्तु याद रखिए, इस खाने में अब आपके ग़रीब किसान भाई आपका साथ देनेवाले नहीं हैं। किसानो की नब्ज़ जितनी दूर तक मैं देख सकता हूँ, आप पंच कहे जने पर भी नहीं। आपकी ज्ञान-शक्ति स्वार्थ के कारण कुंठित जो हो गयी है। आप सच्चे पंच रहे ही कहाँ हैं? **(पीछे की दीवाल की दोनों खिड़कियों के निकट जा उनमें से बाहर की ओर देखते हुए)** बाहर की इस अपार किसान-जनता के, पिताजी, आप सच्ची चूड़ामणि हो सकते थे, **(लौट कर)** पर इतना प्रयत्न करने के पश्चात् मुझे आज मालूम हो गया कि यह आपके लिए संभव नहीं। जाने दीजिए, आपके पाप का प्रायश्चित्त आपका पुण्य करेगा। पंच कहे जानेवाले, इक्के-दुक्के कुल्हाड़ी के बेंट, चाहे ज़मीदार के भोज में सम्मिलित हो जायँ, पर सच्चे किसान कभी भी उस भोज में न जायँगे। वे उन मिठाइयों, उन पूरी-कचौड़ियों, उन साग-रायतों को हाथ भी न लगायँगे, जो उनके ख़ून को चूसकर बनाये गये हैं। वह सामग्री चाहे आप पंचों के गले उतर जाय, पर सच्चे किसानों के ओठों का स्पर्श भी न कर सकेगी। **(दाहनी ओर की दीवाल के दरवाज़े के निकट जाते हुए)** और......और......स्मरण रखिगा, कि चाहे आप अपने भाइयों की इच्छा के विरुद्ध उसे खा आवें **(रुककर, बड़े ही क्रूर स्वर में आँखों से आग-सी बरसाते हुए)** पर वह अब आपको हज़म न हो सकेगी। उसका एक-एक कण आपके उदरों को चीर-चीरकर निकलेगा और...और...**(शीघ्रता से बाहर जाता है।)**

चूरामन

(मानो किसी नींद से जागा हो) बेटा !...बेटा !...ठैर...ठैर...सुन...सुन तो.. (क्रान्तिचन्द्र को न लौटते देख जल्दी से बाहर जाता है ।)

[भीतर बैठे हुए किसानों में खलबली सी मच जाती है, सभी उठकर दरवाज़े की ओर बढ़ते हैं । नेपथ्य में 'क्रान्तिचन्द्र की जय', 'क्रान्ति अमर हो', 'किसानों की जय', 'ज़मींदार-प्रथा का नाश हो' इत्यादि के बुलन्द नारे सुनायी देते हैं ।]

लघु-यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—रघुराजसिंह के महल की बालकनी

समय—मध्याह्न

[वही बालकनी है जो पहले दृश्य में थी। सूर्य तो नहीं दिखता, पर यत्र-तत्र उसमें धूप पड़ती हुई दिखायी देती है, जिस से जान पड़ता है कि दिन चढ़ गया है। रघुराजसिंह अकेला बेचैनी से इधर-उधर टहल रहा। उसके मुख पर उद्विग्नता के भाव झलक रहे हैं। हाथ में उसके वही दूर्बीन है, जो पहले दृश्य में थी। अनेक बार ठहरकर दूर्बीन से वह पीछे के दरख़्तों के परे कुछ देख लेता है। बदहवाससी अवस्था में नर्मदाशंकर का हाथ में एक खुली चिट्ठी लिए हुए जल्दी से प्रवेश।]

नर्मदाशंकर

राजा साहब! राजा साहब!

रघुराजसिंह

(टहलना बन्द कर, नर्मदाशंकर की ओर बढ़कर) कहिए......
कहिए, मैनेजर साहेब, किसानों का कोई पता......

नर्मदाशंकर

जी हाँ। (चिट्ठी रघुराजसिंह को देकर) यह पता है।

(रघुराजसिंह चिट्ठी लेकर उसे पढ़ने क्या, आँखों से पीने-सा लगता है। एक पंक्ति के एक सिरे से दूसरे सिरे तक और एक पंक्ति

के बाद दूसरी पंक्ति पर नाचती हुई उसकी आँखों की पुतलियों से उसके हृदय के उद्वेग का पता चलता है। बड़ी-सी चिट्ठी को वह सैकिण्डों में पढ़ डालता है। उसे पूरा करते-करते उससे खड़ा नहीं रहा जाता; वह पहले कुरसी पकड़ता और फिर एकाएक कुरसी पर बैठ जाता है। कुरसी पर बैठकर वह फिर से चिट्ठी पढ़ता है। अब उसका सिर झुक जाता है। नर्मदाशंकर एकटक रघुराजसिंह की सारी मुद्रा को देखता रहता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

नर्मदाशंकर

देखा, राजा साहब, देखा, आपने इन किसानों की बदमाशी को देखा ? आप इन पर प्राण देते हैं। इनके थोड़े से लाभ के लिए अपनी ज़्यादा से ज़्यादा हानि करने के लिए तैयार रहते हैं। काम सँभालने के बाद आपने इन बदज़ातों के लिए क्या नहीं किया ? पर......पर, राजा साहब, लातों के देव बातों से थोड़े ही सीधे रहते हैं। ज़मीदार की बहन के विवाह-भोज का किसानों द्वारा बहिष्कार ! एक भी किसान का न आना ! और ऐसी......आह ! ऐसी चिट्ठी, बेहूदगी, ज़्यादा से ज़्यादा बेहूदगी भरी हुई चिट्ठी भेजना ! इन दो कौड़ी के किसानों की यह मज़ाल ! इनकी यह हिम्मत ! इनका यह साहस ! इनकी यह हिमाक़त ! ओह ! ज़मीदारों के सिरमौर इस घराने की आज क्या इज़्ज़त रह गयी ? दूसरे ज़मीदार हम पर किस प्रकार हँसेंगे ? हमारी कैसी खिल्ली उड़ेगी ? हमारा कैसा मज़ाक उड़ाया जायगा ? ओह ! ओ......

रघुराजसिंह

(एकाएक खड़े होकर, पत्र को देखते हुए) पर......पर...... मैनेजर साहब, 'किसानों के प्रतिनिधि क्रान्तिचन्द्र' ने ठीक तो

लिखा है—'भक्षक और भक्ष्य का कैसा व्यवहार ?' मेरी ग़लती थी जो मैं यह समझता था कि किसानों का मैं हित कर सकता हूँ। ज़मीदार रहते हुए कोई ज़मीदार किसानों का हित नहीं कर सकता। मुझे......मुझे तो अब दूसरी ही बात सोचनी है।

नर्मदाशंकर

(आश्चर्य से) कैसी ?

रघुराजसिंह

(टहलते हुए) मैं ज़मीदार रहना चाहता हूँ तो सच्चा ज़मीदार रहकर अपना, अपने साढ़े तीन हाथ के शरीर का, अपने छोटे से कुटुम्ब का हित करूँ या...या...(चुप हो जाता है।)

नर्मदाशंकर

या !

रघुराजसिंह

या......या इस ज़मीदारी की तौक़ को गले से निकाल, जिनके हित की मैं डींग मारता हूँ, उन्हीं का-सा हो, उन्हीं के सच्चे हित में अपना जीवन......अपना जीवन व्यतीत कर दूँ।

नर्मदाशंकर

(अत्यधिक आश्चर्य से चिल्लाकर) राजा साहब ! राजा साहब......

[रघुराजसिंह गंभीर मुद्रा से सिर नीचा कर इधर-उधर टहलने लगता है। नर्मदाशंकर आश्चर्य से स्तंभित-सा रघुराजसिंह की ओर देखता रहता है।]

यवनिका

समाप्त

अजीबोग़रीब मुलाकात

(ऐतिहासिक एकांकी)

मुख्य पात्र—

अवध का नवाब

अवध का वजीर

ईस्ट इंडिया कंपनी का एक कमाण्डर

कमाण्डर की पत्नी

दरबान, इत्यादि ।

पहला दृश्य‡

स्थान—लखनऊ के शाही महल में वजीर का कमरा

समय—सन्ध्या

[कमरे की दीवालें जाफ़रान के रंग से रँगी हुई हैं। दीवालों के दरवाजों की चौखटें और किवाड़ों की लकड़ी भी रंगदार है। उन पर सुनहरी कामदानी और सितारों के काम (लखनऊ के एक ख़ास तरह के काम) के परदे पड़े हुए हैं। छत से झाड़ और हंड़ियाँ लटक रही हैं। ज़मीन पर कालीन है और उस पर गद्दी बिछी हुई है। गद्दी पर चिकन के काम (लखनऊ के एक ख़ास तरह के काम) की सफ़ेद चद्दर बिछी हुई है। चद्दर पर मसनद और गाव-तकिये लगे हैं। मसनद और गाव-तकियों की खोलियाँ भी चिकन के काम की हैं। गद्दी पर वज़ीर बैठा हुआ है। वज़ीर अधेड़ अवस्था का गेहुएँ रंग का ऊँचा-पूरा, मोटा-ताज़ा व्यक्ति है। सिर पर पट्टे और मुख पर दाढ़ी है। बालों पर खिजाब किया गया जान पड़ता है। वज़ीर चिकन के काम का अँगरखा और चूड़ीदार पाजामा पहने हुए है। सिर पर दो पालिया टोपी लगाये

‡ The life and opinions of General Sir Charles James Napier G. C. B. by Lieutenant General Sir W. Napier K. C. B. (2nd Edition 1857 Valume IV, Page 296.)

है। वज़ीर के सामने चाँदी का पानदान रखा है। नज़ीक ही चाँदी का हुक्का और उगालदान भी। एक दरवान का प्रवेश। दरवान साँवले रंग का ऊँचा-पूरा व्यक्ति है। वरदी लगाये हुए है।]

दरवान

(सलाम कर) हुज़ूर, नवाब कंपनी बहादुर के सिपहसालार जहाँपनाह की मुलाकात के लिए तशरीफ़ लाये हैं।

वज़ीर

(हुक्का गुड़गुड़ा, घृणा से नाक सकोड़कर) इस वक्त मुलाकात! शाम हो रही है। खुदावन्द के सैर करने का वक्त है।

दरवान

मैंने उनसे यह अर्ज़ की, लेकिन......लेकिन, हुज़ूर......
(चुप हो जाता है।)

वज़ीर

कैसा लेकिन......

दरवान

गुस्ताख़ी मुआफ़ हो, उनकी बेगम भी उनके साथ हैं।

वज़ीर

(आश्चर्य से) उनकी बेगम भी उनके साथ हैं! याने!

दरवान

याने......याने, हुज़ूर वे मय अपनी बेगम साहिबा के जहाँपनाह से मुलाकात करना चाहते हैं।

वज़ीर

(और भी आश्चर्य से) मय अपनी बेगम साहिबा के जहाँपनाह से मुलाकात करना चाहते हैं। (कुछ रुककर, हुक्का गुड़गुड़ा, सोचते हुए) क्या उम्र है इस सिपहसालार की?

दरवान

बूढ़े हैं, हुज़ूर।

वज़ीर

और उसकी बीवी की ?

दरवान

वे भी बहुत कम उम्र की तो नहीं हैं, सरकार।

वज़ीर

(फिर कुछ सोचते, पीक उगालदान में डाल, एक पान दबा, हुक्का गुड़गुड़ाते हुए) उसकी बीवी ही है, यह तुम को कैसे मालूम हुआ ?

दरवान

वे फिरंगवी हिन्दुस्तानी बोल सकते हैं, उन्हींने यह फरमाया कि उनके साथ उनकी जोरू हैं।

[वज़ीर विचारमग्न हो जाता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

वज़ीर

(कुछ देर बाद) कुछ समझ में नहीं आया, जोरू के साथ सिपहसालार का जहाँपनाह से मिलने का क्या मतलब है ? यह एक अजीबोग़रीब मुलाक़ात की दरख़्वास्त है। (फिर कुछ रुककर) तुमने उन्हें बाहरी दीवानख़ाने में ही बिठाया है न ?

दरवान

जी हाँ।

वज़ीर

अच्छी बात है, तुम उनसे कह दो कि मैं अभी ख़ुदावन्द से पूछकर, कि उन्हें फ़ुरसत है या नहीं, उनसे मिलता हूँ।

[वज़ीर उठता है। दरवान का सलाम कर प्रस्थान।]

लघु-यवनिका।

दूसरा दृश्य

स्थान— शाही महल का बाहरी दीवानख़ाना

समय—सन्ध्या

[कमरा वज़ीर के कमरे के सदृश ही है, पर उससे बड़ा; सजावट भी वज़ीर के कमरे के सदृश ही है; इतना ही अन्तर है कि एक गद्दी के स्थान पर इस कमरे के कालीन पर कई गद्दियाँ बिछी हुई हैं, जिन सभी पर मसनद और गाव-तकिये लगे हुए हैं। एक गद्दी पर कमान्डर और उसकी लेडी बैठे हुए हैं। कमाण्डर अँग्रेज़ है; लगभग ४५ वर्ष का, गोरे रंग का, ऊँचा-पूरा, मोटा-ताज़ा, व्यक्ति। उस समय की फैशन के अनुसार वह सिर पर भूरे रंग का 'विग' लगाये है। मूँछ दाढ़ी मुड़े हुए हैं। उसके कपड़े उस काल के अँग्रेज़ी ढंग के मुलाकात के समय के हैं—नीचा रेशमी कोट, गले में चौड़ी रेशमी टाई, पिंडलियों तक रेशमी बिरजिस और पैरों में बिरजिस तक मोज़े। उसकी पत्नी की अवस्था ४० वर्ष से कम नहीं है। वह भी ऊँची-पूरी, मोटी-ताज़ी, अँग्रेज़ महिला है। सिर पर बड़ी-सी टोपी लगाये है। ब्लाउस पूरी बाहों का है और गाउन बहुत अधिक घेरदार तथा पैरों तक नीचा। उसके वस्त्र भी उस काल के अँग्रेज़ी ढंग के हैं।]

कमाण्डर

ओ यस ! हम को हिन्डोस्टानी में ही बाट करना चाइये।

इसी लेंगवेज में नवाब से भी बाट करना होगा।

लेडी

पर, डियर, टुमको उमेड कि मुलाकाट हो जाइगा?

कमाण्डर

उमेड टो करना चाहिये। अाच्चा, अगर मुलाकाट हो गिया टो...... टो शेक हैन्ड टो ये लोग करटा नेई। हम को आडाब बजाना होगा।

लेडी

आडाब......आडाब कौन सा बाजा होटा?

कमाण्डर

बाजा नेई; क्या होटा, अबी बटाटा।

[कमाण्डर खड़े होकर तीन बार पृथ्वी तक झुककर सलाम करता है। दरवान का प्रवेश। वह इस लीला को हँस कर देखता है।]

दरवान

हुज़ूर वज़ीर, साहब जहाँपनाह की ख़िदमत में यह मालूम करने को तशरीफ़ ले गये हैं कि ख़ुदावन्द को फ़ुरसत है या नहीं।

कमाण्डर

(यह जानने के कारण की दरवान ने उसे सलाम करने का रीहरसल करते हुए देख लिया है, शर्माते हुए बैठकर) टुमको उमेड टो है न डरबान, कि हिज मैजिस्टी हम लोगों को मुलाकाट डेगा?

दरवान

मैंने तो यही कोशिश की है, हुज़ूर।

कमाण्डर

(एक अशर्फी दरबान को देते हुए) टुमने वज़ीर से ये कहा या

नेईं कि हमारा जोरू भी जाँपना से मुलाकाट लेने हमारा साठ आया ?

दरवान

मैंने अर्ज़ कर दी, हुज़ूर और इसीलिए तो उम्मीद है कि शाम का वक्त होने पर भी ख़ुदावन्द हुज़ूर से शायद मिल लेंगे।

कमाण्डर

शायड ! शायड, डरबान ? हम इटना डूर से हिज मैजिस्टी से मुलाकाट लेने ईं आया। किटना डूर से आया, डेखो, डरबान। इस गरम मुलुक में सफ़र बड़ा मुसकिल होटा, पर हम...... हम......

दरवान

यह तो ठीक है, हुज़ूर, पर यहाँ तो रोज़ ही न जाने कहाँ-कहाँ से लोग मुलाकात के लिए आते हैं। जहाँपनाह को इतना काम रहता है, जिसका ठिकाना नहीं। इतने पर भी वे हर शख्स से मिलने की कोशिश करते हैं। हाँ, यह दूसरी बात है कि कभी-कभी मुलाकात होने में हफ़्ते और हफ़्ते ही नहीं; महीने भी इन्तज़ारी में गुज़र जाते हैं।

कमाण्डर

(घबड़ाकर खड़े हो) हफ्टे, महीने, इन्टेज़ारी में ! लेकिन... लेकिन डरबान, हमारा जोरू हमारा साठ है; ये......ये टो इटना इन्टेजारी......

दरवान

इसीलिए तो मुझे उम्मीद है, हुज़ूर, कि मुलाकात हो जायगी। (कुछ रुककर) पर मुआफ़ करें, हुज़ूर, तो एक बात अर्ज़ करूँ।

कमाण्डर

ओ! खुशी से, ग्लैडली।

दरवान

हमारे एक शायर ने कहा है, हुजूर—'जो मज़ा इन्तजार में देखा। वो कहाँ वस्ले यार में देखा।'

कमाण्डर

शायर याने पोयट (नोट बुक निकालकर) कलम डावाट, डरवान।

दरवान

(पास ही से कलमदान उठाकर) यह लीजिये, आप लिखना चाहते हैं?

कमाण्डर

यस, यस हम ज़रूर लिखेगा।

[दरवान धीरे-धीरे बोलता है और कमाण्डर लिखता है।]

कमाण्डर

(लिखने के बाद धीरे धीरे पढ़ते हुए) 'जो मजा इन्टेजार में डेखा। वो कहाँ वसले यार में डेखा' ठीक है?

दरवान

(मुस्कराते हुए) बिलकुल ठीक। (कुछ रुककर कलम-दावात को यथास्थान रखता है।)

कमाण्डर

ये इन्टेजारी का टारीफ़ है?

दरवान

जी हाँ। (कुछ रुककर) आप हिन्दुस्तानी में लिख भी लेते हैं, हुजूर?

कमाण्डर

हम हिन्डोटानी रोमन केरेक्टर में लिखटा ।

दरवान

अच्छा, आप आराम से तशरीफ़ रखें; वज़ीर साहब तशरीफ़ लाते ही होंगे ।

[कमाण्डर बैठ जाता है । दरवान का प्रस्थान ।]

कमाण्डर

यस, डियर, जिस टरा......जिस टरा मैंने आडाब बजाया उस टरा नावाब का सामने जाटेई हम डोनों को आडाब बजाना होगा ।

लेडी

लेकिन, डियर, टुमारा आडाब बजाने का रीहरसल उस डरवान ने देख लिया; वो हँसटा टा ।

कमाण्डर

पर क्या किया जा सकटा, नवाब से मुलाकाट या टमाशा ! हमको पूरी टोरे पर टइयार होकर चलना होगा । पैले से टइयार होने को कहा टो टुमने कहा टुम भूल जायगा । (कुछ रुककर) हाँ, टो टुम किस टरा आडाब बजायगा, मुझे बटलाओ ।

[लेडी उठकर हँसते हुए आदाब बजाती है ।]

कमाण्डर

ग्रैण्ड, रीअली ग्रैण्ड ।

[लेडी बैठ जाती है ।]

कमाण्डर

अच्छा, आडाब बजाने का बाड मिजाजपुरसी होगा ।

लेडी

मिजाजकुरसी ! व्हाट इज़ दिस ?

कमाण्डर

मिजाजकुरसी नेई मिजाजपुरसी । जैसा हम लोग हाउ डू यू डू कैटा । वोइ बाट । हम को केना होगा—'जाँपना का मिजाज शरीफ़ ?

लेडी

जाँपना का मिजाज शरीफ़ ।

कमाण्डर

वे वो ! कैपिटल !

लेडी

अच्छा, इसका बाड ?

कमाण्डर

इसका बाड हम सब कुच कर लेगा । जैसा बाट चलेगा, वैसा बाट होगा । टुमको सिरफ़ एक बाट करना होगा ।

लेडी

व्हाट इज़ इट ?

कमाण्डर

हर चीज का टारीफ़ करना । महल का टारीफ़ । फ़र्नीचर का टारीफ़ । डेकेरेशन का टारीफ़ । नवाब का ड्रेस का टारीफ़ । उसका ज्वैलरी का टारीफ़ । उसका सोब सामान का टारीफ़ ।

लेडी

अच्छा ।

कमाण्डर

लुक हियर, डियर, इस टारीफ़ से कबी कबी बड़ा भारी

फायडा बी हो जाटा।

लेडी

हाऊ !

कमाण्डर

जिस चीज का जो टारीफ़ करटा, वो चीज़ उसको डे डिया जाटा।

लेडी

ओ !

कमाण्डर

एंड इफ़ दिस प्रेज इज़ डन वाई ए लेडी।

लेडी

टब टो जरूर डे डिया जाटा, क्यों ?

कमाण्डर

यस। (कुछ रुककर) डियर, जाँटक हम जानटा, आज टक कोई इंगलिश लेडी किसी नवाब से मिलने नेईं गया; टुम पैला लेडी। और हमारा टो समज कि अगर हम इस मुलुक से सच्चा फ़ायडा उटाना चाटा टो हमारा लेडीज़ को इन बड़ा-बड़ा नवाब और राजा से ज़रूर......ज़रूर मिलना चाइये; पार्जाटिक्ली।

लेडी

मालूम टो होटा, वो डरबान बी केटा कि हमरा सबब से मुलाकाट हो जाइगा।

लघु-यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—शाही महल में नवाब का कमरा

समय—सन्ध्या

[कमरा उसी ढंग का बना है जैसा वज़ीर का कमरा था, पर उससे बहुत बड़ा है; सजावट भी उससे बहुत अधिक और बहुमूल्य है। वज़ीर इधर-उधर टहल रहा है; जान पड़ता है नवाब की प्रतीक्षा कर रहा है। कुछ सैकिण्ड बाद नवाब का प्रवेश। नवाब अधेड़ अवस्था का, गौर वर्ण का, उँचा-पूरा, मोटा-ताज़ा व्यक्ति है। सिर पर पट्टे हैं और मूँछें तथा गलमुच्छे। वस्त्र वजीर के सदृश ही हैं। पैरों में लखनवी जरी की जूतियाँ पहने है; जिससे जान पड़ता है कि बाहर जाने के लिए तैयार है।]

वज़ीर

(नवाब को देख, आदाब बजा) अच्छा, जहाँपनाह तो सैर के लिए तैयार हैं।

नवाब

हाँ, वक्त नहीं हो रहा है, वज़ीर ? कोई ख़ास काम है ?

वज़ीर

ऐसा तो कोई नहीं, ख़ुदान्वद, सिर्फ़ ईस्ट इंडिया कंपनी का सिपहसालार मिलने को आया है।

नवाब

कंपनी का सिपहसालार ! कंपनी में सिपहसालार भी रहने लगे ?

वज़ीर

क्या पूछते हैं, जहाँपनाह, थोड़े से सिपाही रख लिये हैं, वे भी इसी मुल्क के, उनके जमादार को कमाण्डर कहते हैं।

नवाब

कमाण्डर याने सिपहसालार ?

वज़ीर

जी, ख़ुदावन्द।

नवाब

उहँ बड़े-बड़े नाम। रोज़गारी है न ? (कुछ रुककर) यह वक़्त कोई मुलाकात का वक़्त है ? इस वक़्त तो हम बाहर जा रहे हैं।

वज़ीर

मैंने तो पहले ही समझा था कि हुज़ूर आली इस वक़्त न मिल सकेंगे। दरवान से मैं उसे कहलाने वाला भी था, लेकिन एक ऐसी बात है जिससे बिना जहाँपनाह को इत्तला दिये कहलाना मुनासिब नहीं समझा।

नवाब

कैसी बात ?

वज़ीर

हुज़ूर, उसकी बीवी भी उसके साथ हुज़ूर की कदम-बोसी के लिये आयी है।

नवाब

(आश्चर्य से) क्या......क्या कहा, उसकी बीवी भी उसके

साथ हमसे मिलने के लिए आयी है ?

वज़ीर

जी, सरकार ।

नवाब

(सोचते हुए) पर उसकी बीवी का हम से मिलने के लिए आने का क्या मतलब ?

वज़ीर

यह तो मैं नहीं समझा, ख़ुदावन्द ।

[कुछ देर निस्तब्धता ।]

नवाब

(सोचते हुए) उसकी बीवी है, या और किसी औरत को वह बीवी बनाकर बेचने के लिए लाया है ?

वज़ीर

(सोचते हुए) कैसे कह सकता हूँ, कहता तो वह यही है कि वह उसकी जोरू है । आख़िर सौदाग़र ही तो ठहरे ।

[फिर निस्तब्धता ।]

नवाब

(कुछ रुककर) अच्छा, बाहर जाने के पहले हम उनसे मिल ही लेते हैं । दीवानेख़ास में उन्हें ले आइए ।

वज़ीर

जो हुक्म ।

[वज़ीर का आदाब बजाकर प्रस्थान ।]

लघु-यवनिका ।

चौथा दृश्य

स्थान—शाही महल का बाहरी दीवानखाना

समय—सन्ध्या

[दृश्य वैसा ही है जैसा तीसरे दृश्य में था। कमाण्डर और उसकी लेडी बैठे हुए हैं। प्रतीक्षा के कारण उनके मुखों पर अत्यधिक उद्विग्नता के भाव झलक रहे हैं। कमरे में निस्तब्धता है।]

कमाण्डर

(कुछ देर बाद) अब टो मुजे बी मुलाकाट का बोट कम उम्मेड।

लेडी

हाँ, किटना डेर......किटना डेर हो गिया।

कमाण्डर

ठेरो और ठेरो, नई टो फिन कल आइगा।

[फिर निस्तब्धता।]

लेडी

(कुछ देर बाद) व्हाई डॉन्ट यू आस्क दि प्यून ?

कमाण्डर

ये शाही पैलेस है, टमाशा नेई। इडर उडर जाना डिफीकल्ट काम। और फिन (नोट बुक निकाल उसे पढ़ते और गाते हुए)

'जो मजा इन्टेजार में डेखा
वो कहाँ वसले यार में डेखा!'

लेडी

नानसैन्स ! अटर नानसैन्स !

[फिर निस्तब्धता ।]

लेडी

(खड़े होकर) हम टो अब वेट नेई करने सकटा ।

कमाण्डर

(खड़े होकर) आच्चा, आच्चा ठेरो, हम डरबान को टलाश करटा ।

[लेडी बैठ जाती है । कमाण्डर ज्योंही एक दरवाज़े से बाहर जाने लगता है । त्योंही दूसरे दरवाज़े से दरवान का प्रवेश । दरवान को देखकर कमाण्डर रुक जाता है ।]

दरवान

हुज़ूर, वज़ीर साहब ।

[कमाण्डर लौटता है । वज़ीर का प्रवेश । कमाण्डर आदाब बजाता है । उसे देख लेडी भी आदाब बजाती है । वज़ीर आदाब का उत्तर देता है ।]

वज़ीर

मैंने सुना आप हिन्दुस्तानी समझ और बोल सकते हैं, कमाण्डर साहब ?

कमाण्डर

यूँ ही टूटा फूटा, वज़ीर साहब ।

वज़ीर

जिस तरह की मैं अंग्रेजी समझ और बोल लेता हूँ ।

कमाण्डर

आच्चा, आप अंग्रेजी समझ और बोल सकटा ?

वज़ीर

यूँ ही, टूटी-फूटी। (कुछ रुककर) आप लोग जहाँपनाह की कदम-बोसी के लिए तशरीफ़ लाये हैं ?

कमाण्डर

(कुछ चकपकाकर) कडम-बोशी......कडम-बोशी।

वज़ीर

मेरा मतलब उनकी मुलाकात से है।

कमाण्डर

(जल्दी से) हाँ, इसीलिए......इसी वास्ते अपना जोरू को साठ इटना डूर से आया, वज़ीर साब।

वज़ीर

हालाँकि यह वक्त ख़ुदावन्द के मिलने का नहीं है, लेकिन आप अपनी बीवी साहिबा को भी साथ लाये हैं इसलिए जहाँ-पनाह आपको अभी दीवाने-ख़ास में मुलाकात बख़्शेंगे।

कमाण्डर

(प्रसन्नता से) मैनी मैनी थैंक्स, वज़ीर साब।

लेडी

(अत्यधिक प्रसन्नता से) यस......यस......मैनी मैनी थैंक्स।

वज़ीर

लेकिन देखिए, यह वक्त जहाँपनाह के बाहर जाने का है, इसलिए कम से कम वक्त लीजिएगा; और मतलब की बात फौरन कर लीजिएगा।

कमाण्डर

बोट आच्चा ! बोट आच्चा ! हमको कोई काम नेईं सिरफ़

रिस्पैक्टस पे करना माँगटा ।

वज़ीर

चलिए, आप लोग मेरे पीछे-पीछे आइए ।

[आगे-आगे वज़ीर और उसके पीछे कमाण्डर और लेडी का प्रस्थान । सबसे पीछे हँसता-हँसता दरवान जाता है ।]

लघु-यवनिका

पाचवाँ दृश्य

स्थान—शाही महल में दीवाने-ख़ास

समय—सन्ध्या

[कमरा अन्य कमरों के सदृश ही है पर सभी से बड़ा। सजावट भी सबसे अधिक और सबसे बहुमूल्य है। एक और अन्तर है, इस कमरे में शाही बैठक के लिए सोने का तख़्त रखा हुआ है, जिस पर कनख़ाब की गद्दी और गद्दी पर मसनद है। तख़्त के ऊपर कनख़ाब की चाँदनी लगी हुई है जिसे सोने के चार चोब उठाये हुए हैं। तख़्त के नीचे, उसके सामने और दोनों ओर अन्य लोगों के बैठने के लिए गद्दियाँ बिछी हैं; नवाब तख़्त पर बैठा हुआ है। तख़्त के एक तरफ़ सोने की चौकी पर सोने का पानदान है और दूसरी ओर सोने की चौकी पर सोने का हुक्का। तख़्त के नीचे एक तरफ सोने का सुन्दर पीकदान भी रखा हुआ है। एक दरवाज़े से आगे-आगे वज़ीर और उसके पीछे कमाण्डर तथा लेडी का प्रवेश।]

वज़ीर

(तख़्त के नज़दीक आते हुए आदाब बजा) जहाँपनाह ये ईस्ट इंडिया कम्पनी के सिपहसालार और आप उनकी बीवी हैं।

[कमाण्डर और लेडी आगे बढ़कर आदाब बजाते हैं। नवाब दोनों का उत्तर देता है।]

कमाण्डर

(और आगे बढ़कर) जाँपना का मिजाज शरीफ़ ?

लेडी

जाँपना का मिजाज शरीफ़ ?

नवाब

जी हाँ, जी हाँ, नवाज़िश है, नवाज़िश है। बैठिए, तशरीफ़ रखिए।

[वज़ीर के साथ दोनों तख़्त के एक ओर की गद्दी पर बैठ जाते हैं।]

वज़ीर

ये हुज़ूर की कदमबोसी के लिए इतनी दूर से आये हैं।

नवाब

मैं आपसे मिलकर बहुत ख़ुश हुआ। **(लेडी को गौर से देखते हुए)** ये आपकी बेग़म हैं ?

कमाण्डर

यस, योर मैजिस्टी हमारा जोरू। जाँपना का कड्म-बोशा को और शाही पैलेस एन्ड......एन्ड लकनौ को देखना का वास्टे ये भी आया।

लेडी

हाँ, डियर, यहाँ सब चीज़ किटना आच्छा...किटना आच्छा। **(तख़्त पर की चाँदनी को देखते हुए एक चोब पर हाथ फेर)** किटना......किटना आच्छा ये है।

कमाण्डर

(धीरे से) डॉन्ट टच, डॉन्ट टच इट, प्लीज़।

लेडी

(चोब पर से हाथ हटाकर, कमाण्डर को घूरते हुए, उगालदान

उठाकर) इटना आच्चा फ़्लावर पोट टो हमने कहीं डेखाई नई।

नवाब

ओफ़! उसे आप न छुएँ, वह उगालदान है।

कमाण्डर

ओ उगालडान! रकडो, रकडो!

लेडी

(उगालदान को अच्छी तरह देखते हुए) उगालडान! उगालडान! लेकिन यह किटना......किटना आच्चा! (देखते-देखते उसे उलटा कर देती है जिससे तमाम गद्दी पर लाल पीक फैल जाता है।)

नवाब

(चिल्लाकर) लाहौलबिलाक़ूवत! यह क्या...क्या किया आपने?

वज़ीर

(उठते हुए) ओफ़ ओह! (ज़ोर से) कोई है? दरवान! दरवान!!

[कमाण्डर और लेडी भी सहमे हुए खड़े हो जाते हैं। दरवान का प्रवेश।]

नवाब

आप दूसरी गद्दी पर बैठिए। (दरवान से) गद्दी फ़ौरन उठवाओ।

[दरवान का दौड़ते हुए प्रस्थान। वज़ीर, कमाण्डर और लेडी दूसरी तरफ़ की गद्दी पर बैठते हैं।]

कमाण्डर

(सहमते हुए) एस्क्यूज अस योर मैजिस्टी, हम नेई जानटा ये क्या ठा?

नवाब

कोई मुज़ायक़ा नहीं, कोई मुज़ायक़ा नहीं। (कुछ रुककर हुक्का गुड़गुड़ा) कहिए, कंपनी का काम अच्छी तरह चल रहा है ?

कमाण्डर

वोट आच्ची टरा, वोट आच्ची टरा।

[वर्दी पहने हुए चार ख़िदमतगार आकर गद्दी उठाकर ले जाते हैं। नवाब हुक्का गुड़गुड़ाता है।]

लेडी

(हुक्के को ग़ौर से देखते हुए) ओ! योर मैजिस्टी, इसका आवाज़ में टो म्यूज़िक है, म्यूज़िक।

नवाब

(वज़ीर से) म्यूज़िक क्या होता है ?

वज़ीर

म्यूज़िक......अह......म्यूज़िक...म्यूज़िक का मतलब...

कमाण्डर

बाजा, जाँपना, बाजा।

नवाब

(कुछ बेरुखी से) बाजा! जनाबमन यह बाजा नहीं है, हुक्क़ा है हुक्क़ा।

लेडी

होक्का! होक्का।

[कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

[नवाब के शाहजादे का प्रवेश। उसकी उम्र ७, ८ वर्ष के लगभग है। वह गौर वर्ण का सुन्दर लड़का है। कामदानी के काम के ज़री के कपड़े पहने है। वह आकर नवाब की आदाब

बजाता है । नवाब उसे तख़्त पर बैठाता है ।]

कमाण्डर

ये जाँपना का बाबा ?

नवाब

(क्रोध को रोकते हुए) बाबा ! अम्याँ, बाबा तुम्हारा होगा, मेरा तो लड़का है ।

लेडी

हाँ, लरका, लरका। किटना आच्चा... किटना आच्चा लरका।

[फिर कुछ देर निस्तब्धता ।]

लेडी

(चारों तरफ़ देखते हुए) यहाँ का सब कुच किटना आच्चा। किटना आच्चा। किटना आच्चा ड्राइगरूम। किटना आच्चा फ़र्नीचर। किटना आच्चा कपरा लत्ता।

नवाब

(क्रोध को दबाते हुए मुस्कराकर) कपड़ा लत्ता ! (कुछ रुककर) अच्छा, हमें बाहर जाना है, आपको इन्तज़ार भी बहुत करना पड़ा। आने का मक़सद कहिए।

कमाण्डर

इन्टेजार......इन्टेजार...... । जाँपना लेकिन......(नोट बुक निकालकर पढ़ते हुए) 'जो मजा इन्टेजार में डेखा वो कहाँ वस्ले यार में डेखा।'

[नवाब और वज़ीर ज़ोर से हँस पड़ते हैं। कमाण्डर और लेडी भौंचक्के-से रह जाते हैं।]

वज़ीर

(हँसते-हँसते जल्दी से) जहाँपनाह को सैर के लिए तशरीफ़

ले जाना है। आप जिस काम के लिए आये हैं, ख़ासकर आपकी बीवी साहिबा, वह जल्दी से अर्ज़ कर दीजिए।

कमाण्डर

काम......काम टो कोई नेई। हम और हमारा जोरू सिरफ़ रिसपैक्टस् पे करने आया।

नवाब

(वज़ीर से) रिस्पैक्ट् पे क्या होता है?

वज़ीर

रिस्पैक्ट् पे......रिस्पैक्ट = इज़्ज़त, पे = देना; इज़्ज़त देने......

नवाब

(खड़े होते हुए) लाहौलबिलाक़ूवत! इस तरह यहाँ औरतों की इज्ज़त की ख़रीद नहीं होती। (वज़ीर से) काफ़ी हो चुका। हटाओ इस औरत को यहाँ से।

[वज़ीर खड़ा होता है, कमाण्डर तथा लेडी भी घबड़ाकर खड़े होते हैं।]

कमाण्डर

(घबड़ाते हुए) औरतों का इज़्ज़ट का खरीड!

वज़ीर

(कमाण्डर और लेडी को बाहर चलने के लिए हाथ से इशारा करते हुए) आइए, आइए, बाहर आइए आप लोग।

[कमाण्डर और लेडी का आदाब बजाकर बाहर प्रस्थान।]

नवाब

(ज़ोर से) वज़ीर!

[वजीर वापस लौट आता है।]

वज़ीर

जहाँपनाह !

नवाब

यह कहाँ की खूसट बुढ़िया का इज्ज़त बेचने को आया था ? इस कंपनी के बड़े अजीबोग़रीब सिपहसालार हैं। यह सब है क्या, वज़ीर ?

वज़ीर

(कुछ सोचते हुए) मेरी भी कुछ समझ में नहीं आया, जहाँ-पनाह। (कुछ रुककर) पर......पर शायद हम ही लोगों ने उन्हें समझने में कोई ग़लती की हो।

नवाब

कैसी ग़लती ?

वज़ीर

(सोचते-सोचते) मैंने एक दफ़ा सुना था कि इन फिरंगियों की बीवियाँ भी खुले आम इस तरह की मुलाक़ातों के लिए आती-जाती हैं।

नवाब

ओफ़ ! कितना......कितना फ़िज़ूल वक्त ज़ाया हुआ इन सब झगड़ों में। (जाते-जाते) यह मुलाक़ात भी एक अजीबो-ग़रीब मुलाक़ात......एक अजीबोग़रीब मुलाक़ात......

[एक ओर नवाब और दूसरी तरफ़ वज़ीर का प्रस्थान।]

यवनिका

समाप्त

बूढ़े की जीभ

(सामाजिक एकांकी)

मुख्य पात्र—

हुकुमचंद	::	::	एक वृद्ध रईस
सरदारमल	::	::	हुकुमचंद का पुत्र
अनोखेलाल	::	::	हुकुमचंद का वैद्य
अन्य पात्र	::	हुकुमचंद का रसोइया और नौकर	

स्थान— हुकुमचंद के मकान का एक कमरा

समय—सन्ध्या

[कमरे की तीन तरफ़ की दीवालें दिखती हैं, दीवालों में ज़मीन से पाँच फुट ऊपर तक रंगीन बेल बूँटेदार ईंटों का 'डेडो' है। उसके ऊपर दीवालें आसमानी रंग से रँगी हुई हैं। रंग में किनार-बन्दी और किनारों के कोनों पर रंगीन फूल-पत्ती बने हैं। तीनों दीवालों में कई दरवाज़े और खिड़कियाँ हैं, जिनसे बाहर के उद्यान का कुछ भाग दिखायी देता है। कमरे की छत पर चूने की नक्काशी है और उस नक्काशी की बेलों और फूलों पर भिन्न-भिन्न रंग। छत से बिजली की बत्तियाँ और पङ्खे झूल रहे हैं, बत्तियों पर सुन्दर 'शेड' हैं। कमरे की ज़मीन पर रंगीन संगमरमर लगा हुआ है। ज़मीन से पीछे की दीवाल के नज़दीक ऊपर की मंज़िल को जाने के लिए लकड़ी का जीना है। कमरे के बीच में एक बड़ासा रेशमी क़ालीन बिछा है। इस क़ालीन पर गद्दीदार सुन्दर सोफ़ा-सेट सजा है। सोफ़ा-सेट के बीच में एक बड़ी सी टेबिल है। जिस पर रेशमी फूलदार टेबिल-क्लाथ है। टेबिल पर रंग-बिरंगे पुष्पों से भरा हुआ गुलदस्ता है और भी कुछ छोटी-छोटी टेबिलें यत्र-तत्र रखी हैं। बाईं ओर की दीवाल के नज़दीक भी एक छोटा-सा रेशमी ग़लीचा बिछा है, जिस पर पलंग रखा है। पलंग के पाये चाँदी के हैं और उस पर स्वच्छ

शैया है। बाईं ओर की दीवाल के नज़दीक भोजन करने के लिए दो पटे रखे हैं—एक बैठने और दूसरा थाल रखने के लिए। पटे पर हुकुमचन्द बैठा हुआ भोजन कर रहा है। हुकुमचन्द की अवस्था लगभग ६५ वर्ष की है। उसका रंग गेहुआँ है और शरीर साधारण ऊँचा, पर बहुत ही दुबला। वह केवल धोती पहने है। ऊपर का शरीर खुला है। शरीर की एक-एक हड्डी दिखती है। सिर, मूँछों और भवों के छोटे-छोटे बाल तथा शरीर की रोमावली सब सफ़ेद हो गये हैं। उसके सामने भोजन की बहुत प्रकार की सामग्री रखी हुई है। हुकुमचन्द बहुत झुक झुक ध्यानपूर्वक देख-देखकर खाता है, जिससे जान पड़ता है उसे बहुत कम दिखायी देता है। वह बोलता ज़ोर से है और कठिनाई से सुनता है, जिससे मालूम होता है कि उसकी सुनने की शक्ति भी बहुत कम हो गयी है। सारे संभाषण में हुकुमचन्द बराबर खाता रहता है। उसके पास ही उसका नौकर खड़ा हुआ है। नौकर की उम्र करीब चालीस वर्ष की है। वह काले रंग का कुछ ठिंगना और दुबला मनुष्य है। घुटनों तक चढ़ी हुई धोती को छोड़कर और कोई वस्त्र शरीर पर नहीं है।]

हुकुमचंद

(ज़ोर से) इतनी देर! बघार लगाने में इतनी देर लग गयी! यदि चूल्हे में आग है तो कड़छुली को तपने में कितनी देर लग सकती है? अगर चौके में घी, हींग और जीरा है तो दाल के छौंकने में इतनी देर का काम क्या? जा, हल्कू, जा, देख तो।

[हल्कू का जीने से ऊपर की मंजिल को प्रस्थान।]

हुकुमचंद

(अपने आप) यह रसोइया बिलकुल बेकाम हो गया है। एक

घंटे के काम में दस घंटे लगाता है। दाल में बघार ही तो देना था। दाल कुछ सिजाना थोड़े ही थी। कड़छुली तपाकर उसमें घी डालने भर का काम था। ठीक तरह कड़छुली तप गयी होती तो घी कड़कड़ाने लगता। कड़कड़ाते हुए घी में हींग और जीरा ही तो डालना था और फिर उस कड़छुली को दाल में। इसमें इतनी देर !

[हल्कू के साथ रसोइये का ऊपर से प्रवेश। रसोइये की अवस्था लगभग पचास वर्ष की है। वह गौरवर्ण का ठिंगना पर बहुत मोटा मनुष्य है। बाल सफ़ेद हो चले हैं। कमर में एक मैला-सा गमछा बाँधे है और कन्धे पर अत्यन्त मैला यज्ञोपवीत दिखता है। वह एक रकेबी में चावल और दाल की कटोरी लिये है। इन्हें वह पटे पर रखता है।]

हुकुमचंद

(ध्यानपूर्वक चावल की रकेबी और दाल की कटोरी को देखकर, गौर से रसोइया को देखते हुए) महाराज, इतनी देर का क्या काम था ? दाल में बघार देने में घंटों ! इतने से काम में तो इतनी देर लग नहीं सकती थी। चूल्हे में आग तो होगी ही। कड़छुली आग में रखने का ही तो काम था। तेज़ आग में कड़छुली को तपते क्या देर लगती है। उसके तपने के बाद उसमें थोड़ा-सा घी ही तो डालना था। ठंड की मौसम भी नहीं कि घी जम गया हो। पिघले हुए घी को गरम कड़छुली में कड़कड़ाते क्या देर लग सकती थी। और घी कड़कड़ाने के बाद उसमें हींग और जीरा ही तो पड़ना था।

रसोइया

सरकार......

हुकुमचंद

महाराज, आपका मन अब काम में नहीं लगता ! किसी दिन भी तो रोटी ठीक नहीं बनती। कभी दाल मे बघार नहीं तो कभी आलू के रसे में दही नदारत। कभी अरवी में पूरा घी नहीं तो कभी परवल में बीजे ही बीजे। कभी करेला कड़ुआ तो कभी भिंडी छिली नहीं। कभी लौकी कड़ू तो कभी ककड़ी कानी। कभी रायते में पूरी राई नही तो कभी श्रीखंड मे जायफल लापता। कभी कचौरी में गरम मसाला नहीं तो कभी समौसे ठंडे। कभी पूरनपूड़ी का पूरन गायब तो कभी मिस्सी रोटी में बेसन ही बेसन। कभी भजिये चीठे तो कभी पकोड़े कड़े। कभी कलाकंद मे रवा नहीं तो कभी पेड़े मे शक्कर ही शक्कर। कभी मलाई मे ठीक तरह से गुलाब नहीं तो कभी बिना लच्छे की रबड़ी, मानो दूध ही दूध।

रसोइया

हुजूर......

हुकुमचंद

रसोइयाजी, काम मे मन न लगता हो तो इस्तीफ़ा दे दो। ऐसी रद्दी रोटी तो मैंने जनम करम में नहीं खायी। तनख़्वाह देने को पैसे होंगे तो एक नहीं, दस रसोइये आ जायँगे। घी, शक्कर सीधा-सामान, साग, भाजी, दूध, दही के लिए पास में टके होंगे तो जो चाहे सो बनवा लूँगा। आप यह न सोचिए कि आपही को ही रसोई बनानी आती है। पृथ्वी निर्जन नहीं हो गयी है। पचासों और सैकड़ो रसोइये जूतियाँ चटकाते हुए घूमते फिरते हैं। मै तो यह सोचता था कि पुराने आदमी हैं। जाने दो, भाई, जाने दो, पर बरदाश्त की हद होती है, महाराज,

कहाँ तक सहूँ। एक दिन की बात हो तो हो। जब तक जीना है तब तक खाना तो पड़ेगा ही। लाइए, पापड़ लाइए।

[रसोइये का प्रस्थान।]

हुकुमचंद

(अपने आप) तनख़्वाह लगती है, सामान ख़र्च होता है, और रसोई का यह हाल! घी आग जलाने को झोंकते होंगे। शक्कर चोरी जाती होगी। साग-भाजी के पैसों में से खा जाते होंगे। तब रसोई ठीक बने तो कैसे बने? रोज़ रसोई की पंचायत। सुबह के कलेऊ में गड़बड़। दोपहर का भोजन ठीक नहीं। तीसरे पहर के तिपहरे में गड़बड़, शाम की ब्यालू बुरी। रात का दूध तक ख़राब। हर वक्त कोई न कोई चकल्लस लगी ही रहती है।

[रसोइये का प्रवेश। वह पापड़ परसता है।]

हुकुमचंद

देखो, महाराज, आज आख़िरी वक्त कहे देता हूँ। रोज़-रोज़ मुझसे यह हाय-हत्या न होगा। इसी हाय-हत्या के मारे जो थोड़ा बहुत खाता हूँ, वह भी अंग नहीं लगता। लगे कहाँ से? ख़ून तो खौलने लगता है। ठंडा ख़ून रहे, उसमें खाना पहुँचे तो हज़म हो। हज़म हो तो ख़ून बने। इसी परेशानी के मारे शरीर की हड्डी-हड्डी निकल आयी है। अब अगर कलेऊ, भोजन, तिपहरे, ब्यालू रात के दूध किसी में भी गड़बड़ हुई तो मुझसे बुरा कोई न होगा। एक मिनिट में मैं टीनपाट कसवा दूँगा। दोनों कान खोलकर सुन लो, दोनों कान!

[हुकुमचंद उठता है। कमर झुक जाने के कारण झुककर चलता है। हल्कू हाथ पकड़कर धीरे-धीरे बाईं ओर के एक दर-

वाज़े से उसे बाहर ले जाता है। रसोइये का प्रस्थान। दाहनी ओर के एक दरवाज़े से सरदारमल और अनोखेलाल का प्रवेश। सरदारमल की अवस्था लगभग ३५ वर्ष की है। उसका रंग गोरा है। वह ऊँचा पूरा, मोटा-ताज़ा साधारणतया सुन्दर मनुष्य है। लंबे बाल और छोटी छोटी मूँछें हैं। वह सफ़ेद कुरता और धोती पहने है, किन्तु नंगे सिर है। अनोखेलाल की अवस्था लगभग ४५ वर्ष की है। वह गेहुएँ रंग का ऊँचा, किन्तु दुबला मनुष्य है। सिर और मूँछों के बाल कुछ-कुछ सफ़ेद हो चले हैं। वह टसर की शेरवानी और सफ़ेद पाजामा पहने है। सिर पर कश्मीरी कामदार टोपी है।]

अनोखेलाल

तो अब तक कोई लाभ नहीं है, कुमर साहब ?

सरदारमल

कोई नहीं, वैद्यजी, दस्त होते ही जाते हैं।

अनोखेलाल

जब तक उनका अन्न न बंद किया जायगा, तब तक दस्त बंद होना कठिन है।

[दोनों दो कुर्सियों पर बैठ जाते हैं। हुकुमचंद के हाथ पकड़े हुए हल्कू लाता है और सावधानी से एक कुरसी पर बैठाता है। हल्कू का प्रस्थान।]

सरदारमल

(ज़ोर से) बाबूजी, वैद्यजी आये हैं।

हुकुमचंद

(ज़ोर से) कौन ? कौन ? कौन आया है, बेटा ?

सरदारमल

(और ज़ोर से) वैद्यजी, बाबूजी।

हुकुमचंद

(ज़ोर से) वैद्यजी, अच्छा, अच्छा। कहाँ हैं, बेटा?

सरदारमल

(ज़ोर से) यहीं आपके सामने बैठे हैं, बाबूजी।

हुकुमचंद

(ज़ोर से) कहाँ? कहाँ, बैठे हैं?

सरदारमल

(और ज़ोर से) आपके सामने ही तो बाबूजी।

अनोखेलाल

(ज़ोर से) आपके सामने ही तो हूँ, लाला साहब।

हुकुमचंद

अच्छा, अच्छा, मुझे कुछ कम दिखने लगा है, वैद्यजी। क्या कहूँ। भोजन कम हो गया है तब आँख की जोत कैसे ठीक रहे। आँख की जोत तो घी से रहती है। घी पेट में पहुँचता ही नहीं। और जो पहुँचता है सो हज़म नहीं होता।

[हल्कू का एक रकाबी लेकर प्रवेश। रकाबी में पान, किमाम, मसाले की सुपारी, इलायची, लौंग, जायपत्री बहुत-सी चीज़ें हैं। वह एक छोटी टेबिल उठा उसे हुकुमचंद के बहुत नजदीक रख उस पर रकेबी रखता है।]

हल्कू

(ज़ोर से) पानदान रखा है, हुज़ूर! **(प्रस्थान।)**

हुकुमचंद

(पान उठाकर खाते हुए) हाज़मा तो इतना बिगड़ गया है,

वैद्यजी, कि ठिकाना ही नहीं। कुछ भी खाता हूँ तो पेट में घुड़दौड़-सी मच जाती है। फिर गटड़-गटड़ गाड़ी-सी चलती रहती है। कभी-कभी पेट फूलकर नागाड़ा हो जाता है। बुरी-बुरी डकार और जब देखो तब भूख लगी हुई।

अनोखेलाल

यह सब, लाला साहब, अवस्था के कारण है।

हुकुमचंद

(ज़ोर से) क्या, क्या, क्या कहा आपने? मैं कुछ ऊँचा भी सुनने लगा हूँ।

अनोखेलाल

(ज़ोर से) मैंने कहा कि कम दिखना, कम सुनना, हाजमे का ख़राब यह सब अवस्था के कारण है।

हुकुमचंद

अवस्था के कारण! अवस्था के कारण! क्या कहते हैं, वैद्यजी? मेरे पिता अस्सी साल की उमर में नजदीक से नजदीक लिखा हुआ पोस्ट कार्ड बिना चश्मे के पढ़ते थे। मेरी माँ पचासी साल की उमर में बिना ऐनक लगाये सुई में डोरा पिरो देती थीं, और वह भी रात को। मेरे दादा नब्बे साल के होकर मरे पर कान के इतने सच्चे थे कि अगर कमरे में तिनका भी गिर पड़े तो उसकी आवाज़ तक उनके कान में पहुँच जाती थी। इसका कारण था, वैद्यजी उन सबकी खुराक थी। अच्छा हाज़मा था। पिताजी अस्सी साल की अवस्था में सबेरे पूरे डेढ़ सेर दूध और आध सेर पूरी का कलेवा करते थे। दोपहर को भोजन के साथ खिचड़ी बनती थी। उसमें आधसेर घी रहता था। तीसरे पहर के तिपहरे में बारों महीने डेढ़ पाव बदाम और

और डेढ़ पाव पिश्ते तलवाकर उसमें सेंधा नमक और काली मिर्च भुरकाकर खाते थे। **(मुँह में पानी आ जाता है, उसे गुटकते हुए)** शाम को ब्यालू में हमेशा पराठे रहते थे और वे भी पूरे तीन पाव। और इस सबके ऊपर, वैद्यजी, रात को सोते वक्त अढ़ाई सेर दूध की रबड़ी पीते थे।

अनोखेलाल

परन्तु आपका हाज़मा......

हुकुमचंद

क्या कहा, मेरे दादा? उनका तो पूछिए मत। वे नब्बे साल तक जिये, लेकिन नब्बे साल की उमर में भी पट्ठे दिखते थे, पट्ठे। उनकी खुराक......

अनोखेलाल

(बहुत ज़ोर से) मैं कह रहा था कि आपका तो हाज़मा ठीक नहीं है।

हुकुमचंद

(ज़ोर से) हल्कू! ओ हल्कू!

[हल्कू का दौड़ते हुए प्रवेश। वह हुकुमचंद के बहुत निकट खड़ा होता है।]

हुकुमचंद

कौन?

हल्कू

(ज़ोर से) मैं हूँ, सरकार।

हुकुमचंद

अबे तू कितना भूलता है? रकाबी में न तांबूलबिहार है न पिपरमेंट। मुझे पान खाना है, या घास?

[हल्कू दौड़कर जाता है ।]

हुकुमचंद

(अनोखेलाल से) आपने क्या कहा मेरा हाज़मा ठीक नहीं ! पर, वैद्यजी, इसे ठीक करने की जिम्मेदारी किस पर है ! आप पर। आपकी दवा......

अनोखेलाल

आपको अन्न छोड़ना होगा, लाला साहब ।

[हल्कू तांबूलबिहार और पिपरमेंट की शीशी रकाबी में रख कर जाता है ।]

हुकुमचंद

(ज़ोर से बिगड़ कर) क्या, अन्न छोड़ना पड़ेगा ! अजी वैद्यजी, इसका नाम न लेना । अन्न छोड़ना पड़ेगा ! अन्न छोड़ दूँगा तो अभी उठ-बैठ तो लेता हूँ, फिर तो हिलडुल भी न सकूँगा । अन्न छोड़ना पड़ेगा ! अजी खाता ही क्या हूँ, कि अन्न छोड़ दूँ ! पिताजी जितना खाते थे उससे तो सब मिलाकर आधा भी पेट में न जाता होगा। दादाजी जितना खाते थे, उससे चौथाई नहीं। फिर उनसे तो मेरी उम्र भी कम है । अन्न छोड़ना पड़ेगा ! आपकी दवा कार नहीं करती है तो बेचारे अन्न पर आफत ! अजी वैद्यजी, आप लोग इलाज करना नहीं जानते । मुझे याद है अपने पिताजी की दो बीमारियों की । उस समय इस शहर में शंकररावजी वैद्य थे । क्या पूछना । दूर-दूर उन-सा वैद्य न था। वे जहाँ पहुँचे, बीमारी भागी । दवा देने की ज़रूरत ही नहीं । उनके दर्शन से बीमारी भागती थी, दर्शन से। पिताजी को एक बार दस्त हुए । दिन में डेढ़-डेढ सौ दस्त । वे एक तो कभी बीमार होते ही नहीं थे फिर थोड़ी बहुत बीमारी

में वैद्य, डाक्टर को न बुलाते थे। जब दस्त बहुत बढ़े तब हम लोगों ने जबर्दस्ती शंकररावजी को बुलाया। उन्होंने फिर भी नहीं। डेढ़ डेढ़ सो दस्त लगते थे, वैद्यजी, डेढ़-डेढ़ सौ। आप मानेंगे नहीं। पर आँखों देखी बात बताता हूँ, आँखों देखी। शंकर-रावजी ने आते ही एक खुराक दवा दी। ओरसे पर घिसकर। और एक खुराक से दस्त बन्द। डेढ़ डेढ़ सौ दस्त गायब। दूसरे दिन बँधा ठोस पाखाना। (कुछ रुककर) एक दफ़ा पिताजी को बुखार आया। क्या कहूँ ऐसा बुखार कि दिन और रात उतरता ही न था। बड़ी मुश्किल से शंकररावजी बुलाये गये। एक खुराक शहद में मिलाकर चटाई। एक ही खुराक से पसीने की धारें लग गयीं, धारें। घड़ों पसीना निकला होगा, वैद्यजी, घड़ों। बिस्तर की चादर नहीं, गद्दा तक भीग गया। एक खुराक मे बुखार रफ़ू-चक्कर और फिर तारीफ़ यह कि उसके बाद दस साल तक बुखार न आया। अजी वैद्यजी, इलाज क्या जादू था, जादू। दवा आप की न लगे और अन्न बन्द कर दो! यह भी कोई......(ज़ोर से) हल्कू! ओ हल्कू!

[**हल्कू का दौड़कर प्रवेश। वह बहुत नजदीक जाकर खड़ा हो जाता है।**]

हुकुमचंद

कौन......कौन......हल्कू?

हल्कू

जी हुज़ूर।

हुकुमचंद

चल, ले तो चल, मैं पाखाने जाऊँगा (**हल्कू हाथ पकड़कर उठाता है। जाते-जाते**) वैद्यजी, अभी आप मेरी बीमारी का

निदान ही नहीं कर सके हैं। अन्न बन्द कर दो ! (रुककर) अजी अन्न बन्द करना आजकल खेल-तमाशा हो गया है। पहले जमाने में एक तो अन्न बंद किया ही न जाता था और अगर किया जाता था तो बड़ी कड़ी बीमारियों में। मुझे तो दस बारह दस्त ही होते हैं। मैंने बताया न आपको, पिताजी को एक बार डेढ़-डेढ़ सौ दस्त हुए थे, डेढ़ डेढ़ सौ। शंकररावजी ने अन्न बंद करने की बात भी न सोची थी। अन्न बन्द करना कोई सहज बात है ! इस उमर में आप अन्न बद करा देंगे तो फिर वह कभी शुरू भी होगा ? (आगे बढ़ता है। फिर रुककर) और फिर अन्न बन्द हो गया तो दस्त आपसे आप बंद हो जायँगे। आपने उसमें किया ही क्या ? दवा से फायदा थोड़े ही हुआ। आप तो अन्न बन्द करने की बात करते हैं। शंकररावजी तो परहेज तक न कराते थे। बिना परहेज के, सुना, वैद्यजी, बिना परहेज के अच्छा करते थे। (जाते जाते) सोचिए, बीमारी का निदान तो कीजिए। अन्न बन्द कर दो ! अन्न बन्द !

[हुकुमचन्द का हल्कू के साथ प्रस्थान। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

सरदारमल

निदान के सम्बन्ध में आपने विचार किया, वैद्यजी ?

अनोखेलाल

बहुत अच्छी प्रकार, कुमर साहब।

सरदारमल

अच्छा।

अनोखेलाल

चरक, सुश्रुत, बाग्ग यह सब ग्रन्थ मैंने अच्छी पकार देखे

डाले।

सरदारमल

ठीक।

अनोखेलाल

लाला साहब को जीभ की बीमारी है, कुमर साहब।

सरदारमल

जीभ की बीमारी !

अनोखेलाल

हाँ, जीभ की बीमारी।

सरदारमल

अर्थात् !

अनोखेलाल

अर्थात् उनकी पाँच कर्मेन्द्रियों और पाँच ज्ञानेन्द्रियों में नव इन्द्रियों ने अपना सारा कार्य बन्द कर अपना समस्त बल एक जीभ को दे दिया है।

सरदारमल

नवों इन्द्रियो ने अपना सब काम बन्द कर अपना सारा बल जीभ को दे दिया है !

अनोखेलाल

जी हाँ। नव इन्द्रियाँ एकदम निर्बल और दसवीं इन्द्रिय अत्यधिक बलवान है।

सरदारमल

अच्छा।

अनोखेलाल

फल यह हुआ कि जीभ की आहार और वक्तृत्व दोनों

शक्तियाँ अत्यन्त बलिष्ठ हो गयी हैं।

सरदारमल

हाँ, सो तो दिखता ही है। दिन-रात तरह-तरह का भोजन बनवाया जाता है और फिर भी रसोइये पर डाँट पर डाँट। बात तो किसी की सुनते ही नहीं अपनी ही कहते हैं।

अनोखेलाल

मनुष्य के दो कान और एक जीभ इसलिए होते हैं कि वह अधिक सुने और कम बोले परन्तु यहाँ...यहाँ तो नवों इन्द्रियाँ का सारा पुरुषार्थ अकेली जीभ को मिल गया है।

सरदारमल

यह तो विचित्र बीमारी है।

अनोखेलाल

नहीं, इस अवस्था में नव इन्द्रियाँ शिथिल और जीभ सभी की बलशाली हो जाती है परन्तु...परन्तु (चुप हो जाता है।)

सरदारमल

परन्तु......?

अनोखेलाल

परन्तु यदि वह इतनी शक्तिशाली हो जाय जितनी आपके पिताजी की हो गयी है तब तो......तब तो......(चुप हो जाता है।)

सरदारमल

(उत्सुकता से अनोखेलाल की ओर देखते हुए) तब तो?

अनोखेलाल

(सरदारमल की ओर देखते हुए) तब...तब तो रोग असाध्य हो जाता है।

सरदारमल

(आश्चर्य से) असाध्य, वैद्यजी !

अनोखेलाल

हाँ, असाध्य, कुमर साहब।

[दोनों एक दूसरे को देखते हैं।]

यवनिका

समाप्त